उत्तराखण्ड के साहित्यिक परिदृश्य में महिला साहित्यकार

मधु डी. सिंह

उत्तराखण्ड के साहित्यिक परिदृश्य में महिला साहित्यकार

मधु डी. सिंह

प्रकाशक
वीमैन्स स्टडीज़ सैन्टर
श्री गुरु राम राय (पी.जी.) कॉलेज, देहरादून

Published by:
Women's Studies Centre
SGRR (PG) College, Dehradun

First Edition : 2015

© Women's Studies Centre,
SGRR (PG) College, Dehradun
e-mail : wscsgrrcollege@yahoo.com

All rights reserved. No part of this publication may be reproduced, stored in a retrieval system, transmitted or utilized in any form or by any means, electronic, mechanical, photocopying, recording or otherwise, without the prior permission of the copyright owner. Application for such permission should be addressed to the publisher.

ISBN: 978-81-923430-2-0

Printed by:
Priyanka Graphic Printer
77 Govindgarh, Dehradun
Mob.: 9410101023

श्री महन्त देवेन्द्र दास
सज्जादा नशीन
श्री गुरु राम राय
दरबार साहिब, देहरादून

सन्देश

उत्तराखण्ड एक समृद्ध साहित्यिक सम्पदा का प्रदेश रहा है, इस तथ्य से हम सभी परिचित हैं। चाहे प्रकृति के सुकुमार कवि सुमित्रानन्दन पन्त हों, या फिर अपने सजीव पात्रों से पाठकों के हृदय पर अमिट छाप छोड़ने वाली गौरा पन्त 'शिवानी'–उत्तराखण्ड अनेकानेक कवियों, कहानीकारों, उपन्यासकारों, नाटककारों की जन्मस्थली व कर्मस्थली रहा है। तथापि यह भी सत्य है कि पुरूष साहित्यकारों की तुलना में महिला साहित्यकारों की रचनाओं से पाठक अपेक्षाकृत कम परिचित हैं।

यूजीसी द्वारा प्रायोजित श्री गुरू राम राय वीमैन्स स्टडीज़ सैन्टर महिला साहित्यकारों, विशेषकर उत्तराखण्ड की महिला साहित्यकारों की रचनाओं का संकलन, अनुवाद तथा प्रकाशन पिछले कई वर्षो से कर रहा है। इसी कड़ी में वर्ष 2011 में उत्तराखण्ड **के साहित्यिक परिदृश्य में महिला साहित्यकार** विषय पर संगोष्ठी आयोजित की गई थी जिसमें जानी मानी कवयित्रियों/लेखिकाओं ने अपने आलेख प्रस्तुत किये थे। उनका अब पुस्तक रूप में प्रकाशन किया जा रहा है, यह अत्यन्त हर्ष का विषय है।

मैं श्री गुरू राम राय वीमैन्स स्टडीज सैन्टर की समन्वयक डा0 मधु डी0 सिंह तथा उनकी पूरी टीम को हार्दिक बधाई देता हूँ तथा आशा करता हूँ कि इस पुस्तक के माध्यम से प्रबुद्ध पाठक इस तथ्य से परिचित हो पायेंगे कि उत्तराखण्ड की साहित्यिक परम्परा में महिलाओं का भी उल्लेखनीय योगदान रहा है।

(श्रीमहन्त देवेन्द्र दास)
"सज्जादा नशीन"
श्री गुरू राम राय दरबार साहिब
देहरादून।

सन्देश

यूजीसी द्वारा प्रायोजित हमारे महाविद्यालय का वीमैन्स स्टडीज़ सैन्टर अपने स्थापना वर्ष (2010) से ही लगातार महिला केन्द्रित विषयों पर विभिन्न कार्यक्रम जैसे ट्रेनिंग, सेमिनार, संगोष्ठी व कार्यशाला आदि आयोजित करता आ रहा है। इसके कार्यक्षेत्र का सबसे महत्वपूर्ण अंग है– उत्तराखण्ड की महिला साहित्यकारों की रचनाओं का संकलन, अनुवाद, मुद्रण तथा प्रकाशन। इसी लक्ष्य को ध्यान में रखते हुए वर्ष 2011 में केन्द्र द्वारा एक संगोष्ठी का आयोजन किया गया था जिसका शीर्षक था **"उत्तराखण्ड के साहित्यिक परिदृश्य में महिला साहित्यकार"** जिसमें उत्तराखण्ड की अनेक विदुषी साहित्यकारों ने भाग लिया था। उनके शोधपरक आलेखों को अब पुस्तक रूप में प्रकाशित किया जा रहा है। यह निश्चय ही सराहनीय प्रयास है।

मैं उन सभी साहित्यकारों का हृदय से आभार व्यक्त करता हूँ जिन्होंने अपने सारगर्भित विचारों से इस संगोष्ठी को सफल बनाया। उन्हीं के सत्प्रयासों से हम सभी पाठकों का देवभूमि के सुदूर कोनों में रहते हुए अपनी रचनाओं से उत्तराखण्ड की साहित्यिक परम्परा को समृद्ध करने वाली साहित्यकारों से परिचय होगा, ऐसा मुझे विश्वास है।

डॉ. मधु डी. सिंह व उनकी टीम को इस प्रयास के लिए बधाई।

V.A. Bonai.

प्रो. वी.ए. बौड़ाई
प्राचार्य, श्री गुरु राम राय (पी.जी.) कॉलेज

प्राक्कथन

गत पाँच-छह दशकों में उपन्यास संपूर्ण विश्व में वैश्वीकरण के समय में एक प्रमुख विधा के रूप में उभर कर सामने आया है। आज के युग एवं परिस्थितियों में सामाजिक एवं व्यक्तिगत अभिव्यक्ति के लिये उपन्यास विधा का प्रयोग एवं प्रासंगिकता अन्य विधाओं की अपेक्षा अधिक प्रचलन में है। संपूर्ण विश्व में विशेषकर तीसरी दुनिया में उपन्यास के क्षेत्र में महिला लेखकों का वर्चस्व बीसवीं सदी की एक महत्वपूर्ण उपलब्धि कही जा सकती है। साहित्य के क्षेत्र में महिला लेखकों की सक्रियता का अनुमान पिछले डेढ़ दशक में महिला लेखकों को साहित्य के लिये प्रदत्त नोबेल पुरस्कारों से लगाया जा सकता है। 1991 में दक्षिणी अफ्रीका की नदाइन गौर्डिमर, 1993 में अमेरिका की अश्वेत लेखिका टोनी मोरीसन, 1996 में पोलैंड की विसलावा सिजवोर्सका, 2004 में आस्ट्रिया की एलफ्रीड जेलिंक् और 2007 में ब्रिटिश लेखिका डौरिस लेसिंग को साहित्य के लिये नोबेल पुरस्कार प्राप्त हुआ। इन लेखिकाओं में पोलैंड की कवयित्री विसलावा सिजवोर्सका को छोड़ अन्य सभी लेखिकाएं उपन्यासकार अथवा नाटककार हैं। किसी भारतीय महिला को भले ही अभी तक नोबेल पुरस्कार न मिला हो किन्तु विश्व साहित्यिक पटल पर प्रवासी भारतीय लेखिकाओं ने विशेष रूप से अपनी उपस्थिति दर्ज की है। 2006 में किरन देसाई के उपन्यास **द इन्हेरिटेन्स आफ लौस** (The Inheritance of Loss) और इससे पूर्व 1997 में अरून्धती राय के उपन्यास **द गॉड ऑफ स्माल थिंग्स** (The God of Small Things) को **बुकर पुरस्कार** प्राप्त होना भारतीय लेखिकाओं की अन्तर्राष्ट्रीय पहचान एवं स्वीकृति का द्योतक है। वर्ष 2000 में झुम्पा लाहिरी को उनके कहानी संग्रह **इन्टरप्रेटर ऑफ मैलेडीज़** (Interpreter of Maladies) के लिये अमेरिका का प्रतिष्ठित **पुलित्सर पुरस्कार** मिला। यह पुरस्कार प्राप्त करने वाली दक्षिणी एशियाई मूल की वह प्रथम लेखिका हैं। अनीता देसाई, शोभा डे, नयनतारा सहगल, चित्रा दिवाकरनी, भारती मुखर्जी, शौना सिंह बोल्डविन, सुनीती नामजोशी, मीना एलेक्जेंडर इत्यादि लेखिकाओं को अन्तर्राष्ट्रीय मंच पर स्वीकृति और व्यापक पहचान मिली है।

यह निश्चय ही एक सुखद साहित्यिक पहलू है। एक समय था जब महिला साहित्य को चौके चूल्हे का साहित्य कह कर उपहास किया गया। प्रसिद्ध अंग्रेजी उपन्यासकार जेन आस्टिन की रचनाओं को दो इंच चौड़ी आइवरी (Two inches of Ivory) की संज्ञा दी गयी। किन्तु तस्वीर का दूसरा पहलू यह भी है कि जहाँ एक ओर मुख्य धारा में पुरुष

लेखकों को महिला लेखकों की अपेक्षा अधिक आदर और प्रमुखता दी जाती है, वहीं महिला लेखिकाओं में आज भी अंग्रेजी लेखिकाओं का वर्चस्व कायम है। हिन्दी तथा अन्य भाषा लेखिकाओं को राष्ट्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर वह पहचान नहीं मिल पायी है जिसकी वे हकदार हैं। जहाँ तक साहित्यिक और सामाजिक सरोकारों का प्रश्न है, भाषा लेखिकाओं ने समाज की विभिन्न समस्याओं, पहलुओं और मुद्दों को अपनी रचनाओं के माध्यम से उभारा है। समाज के बदलते स्वरूप, उसकी अपेक्षाओं, रीतियों, कुरीतियों, विकृतियों की सूक्ष्म विवेचना की है। नारी जागरण और नारी मुक्ति आंदोलनों के परिप्रेक्ष्य में महिला साहित्य में अस्मिता, अपनी पहचान, दांपत्य जीवन के बहुआयाम, पितृसत्तात्मक समाज में स्त्री की स्थिति का आलोचनात्मक अध्ययन किया गया है। सुविधा की दृष्टि से स्वातंत्रोत्तर काल में महिला लेखन को हम मोटे तौर पर दो चरणों में विभक्त कर सकते हैं :

(1) प्रारम्भिक चरण

(2) द्वितीय चरण

(1) पूर्व स्वातंत्रोत्तर काल के प्रारम्भिक चरण में महिला लेखन के मूल में आदर्श परिवार व आदर्श नारी की अवधारणा रही है। स्वाधीनता आंदोलन, नवजागरण व सुधारवादी आंदोलनों के परिप्रेक्ष्य में भारतीय नारी के परम्परागत स्वरूप को ही महिमामंडित किया गया। किन्तु स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात स्त्री स्वतन्त्रता, दिग्भ्रमित मूल्यहीनता, आधुनिकता और युग बोध लेखिकाओं के चिंतन का विषय बने। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात देश का विभाजन एक महान त्रासदी थी। विभाजन में सर्वाधिक अवमूल्यन मानवीय विश्वास, विवेक और मूल्यों का हुआ। अमृता प्रीतम का 'पिंजर', कृष्णा सोबती का 'जिन्दगीनामा' और कुर्तल एन हैदर का 'आग का दरिया' विभाजन के कई अछूते पहलुओं- यथा सम्बन्धों में परिवर्तन, एक साथी सभ्यता और संस्कृति की मंडल, राजनीतिक प्रपंच और जनमानस के भटकाव की वृहद विवेचना करते हैं किन्तु विभाजन साहित्य की मुख्य धारा में पुरुष लेखकों की ही पहचान और उपस्थिति हमें लेखन क्षेत्र में स्त्री लेखन की शोचनीय स्थिति से अवगत कराती है। यह अवश्य ही एक विचारणीय विषय है कि सादत अली मंटो, भीष्म साहनी, खुशवन्त सिंह और कमलेश्वर सरीखे लेखकों की तुलना में भाषा लेखिकाओं को आज भी मूल्यांकन की अपेक्षा है।

(2) द्वितीय चरण में हम साठ के दशक की गतिविधियाँ व महिला साहित्यकारों के सरोकारों पर एक सरसरी नजर डाल सकते हैं। इस दशक में पाश्चात्य जगत में नारी मुक्ति आंदोलनों की गूँजती पुकार भारत में सुनाई दी। सिमोन द बोयर, जरमेन दि डायर इत्यादि पाश्चात्य महिला चिंतकों ने पितृसत्तात्मक समाज में स्त्री की दोयम दर्जे की स्थिति के विरुद्ध आवाज उठायी जिसका प्रभाव उस समय के महिला लेखन पर स्पष्ट परिलक्षित होता है। नारी अस्मिता, पुरुष समाज में नारी की स्थिति, परिवार तथा समाज में स्त्री के श्रम का उचित मूल्यांकन, मातृत्व, स्त्री की काम भावना जैसे वर्जनीय मुद्दे केवल बहस के ही नहीं साहित्य का भी हिस्सा बने। प्रसिद्ध अंग्रेजी उपन्यासकार और आलोचक वर्जीनिया वुल्फ के शब्दों में- "हर स्त्री को अपने लिये एक अपनी जगह की दरकार होती है।" अपनी एक छोटी सी जगह हर स्त्री चाहती है चाहे वह माँ, बेटी, बहू, पत्नी, ननद, सास, कोई भी हो। बंगाल में आशापूर्णा देवी, महाश्वेता देवी, महाराष्ट्र में रमाबाई, कर्नाटक में एम. के. इन्दिरा, उड़ीसा में प्रतिभा राय, पंजाब में अमृता प्रीतम, दलीप कौर टिवाणा, आसाम में इन्दिरा गोस्वामी, उर्दू में मेहरुन्निसा परवेज, इस्मत चुगताई, नासिरा शर्मा, हिन्दी में कृष्णा सोबती, ऊषा प्रियम्वदा, मृदुला गर्ग, मंजुला भगत, मन्नू भंडारी, चित्रा मुद्गल, मैत्रेयी पुष्पा, शिवानी, गीतांजलि श्री - सूची बहुत लंबी है जिन सबका इस लेख में समावेश करना संभव नहीं-इन सभी की रचनायें नारी से जुड़े अनेकानेक पहलुओं, मुद्दों, सरोकारों से पाठकों को रूबरू कराती हैं। उदाहरणार्थ आशापूर्णा देवी का उपन्यास त्रयी -'प्रथम प्रतिश्रुति', 'सुवर्णलता' और 'बहुलता' के मूल में तीन पीढ़ियों की नारी हैं जो हर काल, हर समय में अपने अधिकार, अपनी अस्मिता, अपने परिवार के उत्थान के लिये सतत प्रयत्नशील और संघर्षरत हैं। सत्यवती के आदर्श, सुवर्णलता का अपनी संतान को शिक्षित करने के लिये गाँव से कलकत्ता जाना, संयुक्त परिवार छोड़ एकल परिवार की इकाई का चुनाव और तीसरी पीढ़ी की बकुल का लेखिका रूप में उद्भव- ये सब समाज में नारी की परिवर्तनशील भूमिका एवं पारिवारिक तथा सामाजिक सरोकार इंगित करते हैं। इन्दिरा गोस्वामी का उपन्यास 'द सागा ऑफ कामरूप' जहाँ आभिजात्य वर्ग में विधवा की स्त्री की समीक्षा करता है तो 'छिन्नमस्ता' बलि प्रथा के विरूद्ध आवाज उठाता है। उड़िया लेखिका प्रतिमा राय का 'याज्ञसेनी' द्रौपदी की कहानी द्रौपदी के माध्यम से कहकर नारीपक्ष प्रस्तुत करता है जहाँ द्रौपदी की पीड़ा की नारी दृष्टि से समीक्षा की गयी है। उषा प्रियंवदा के उपन्यास- 'रुकोगी नहीं राधिका' और 'शेष यात्रा' विदेशों में रह रही भारतीय नारी के अन्तर्द्वन्दों का मर्मस्पर्शी चित्रण करती है। किन्तु हिन्दी में लिखे यह उपन्यास

डाइसपोरिक रचनाओं की श्रृंखला में अन्य प्रवासी अंग्रेजी भारतीय लेखिकाओं-भारती मुखर्जी, झुम्पा लाहिरी, चित्रा दिवाकरूणी, शौनासिंह जैसी प्रसिद्धि नहीं पा सके हैं जो भाषा साहित्य की चिंता और विचार का विषय होना चाहिये।

नारी जीवन के सरोकारों से संबंद्ध रचनाओं में मृदुला गर्ग के उपन्यास, मुख्यत: 'चितकोबरा' की चर्चा की जा सकती है जो विवाह संस्था की अप्रासंगिकता तथा अर्थहीनता की विवेचना करता है। समाज, विशेषकर विवाह की संस्था के खोखलेपन की इसमें चर्चा है। इस दृष्टि से मन्नू भंडारी का 'आपका बंटी' एक अत्यन्त महत्वपूर्ण रचना है जो विघटित परिवार में एक बच्चे की त्रिशंकु सदृश स्थिति का मर्मस्पर्शी चित्रण करती है। भारतीय अंग्रेजी लेखिकाओं कमला मार्कण्डेय, अनीता देसाई, नयनतारा सहगल, शशि देशपांडे और शोभा डे आदि ने विघटित परिवार, विघटित विवाह संस्था और नारी पुरुष संबंधों के बदलते स्वरूप को अनेक बिंदुओं और कोणों से अपनी रचनाओं में उभारा है लेकिन विघटित परिवारों में बच्चों की समस्या को इतने सजीव ढंग से कहीं भी नहीं उभारा गया। अनीता देसाई का उपन्यास 'द फायर इन द माउन्टेन' एक विघटित परिवार की चार वर्षीय बच्ची के जीवन के कुछ चित्र अवश्य प्रस्तुत करती है किंतु संवाद और विस्तार के अभाव में वह एक चलचित्र की तुलना में मूक तस्वीर सदृश ही प्रतीत होते है।

स्वातंत्रोत्तर काल की यह सभी रचनायें प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप में नारी प्रधान रचनायें हैं। अब हम यहाँ कुछ ऐसी रचनाओं की चर्चा करेंगे जहाँ नारी की चिंता नारी से परे समाज के अन्य सरोकारों से है। यह रचनायें समाज की खुरदरी धरती के कटु और कठोर यथार्थो से खाद, पानी और ऊर्जा ग्रहण करती हैं। मन्नू भंडारी के शब्दों में:

"अपने व्यक्तिगत दु:ख, दर्द, अंतर्द्वन्द या आंतरिक 'नाटक' को देखना बहुत महत्वपूर्ण ,सुखद और आश्वस्तिदायक तो मुझे भी लगता है, मगर जब घर में आग लगी हो तो सिर्फ अपने अंतर्जगत में बने रहना या उसी का प्रकाशन करना क्या खुद ही अप्रासंगिक, हास्यास्पद और किसी हद तक अश्लील नहीं लगता?" (महाभोज से)

उत्तर औपनिवेशिक काल में मौलिक एवं सांस्कृतिक मूल्यों का अवमूल्यन सभी की चिन्ता का विषय रहा है। राजनीतिक क्षेत्र में चोरबाजारी, घूसखोरी, महँगाई, व्यक्तिगत स्वार्थ की राजनीति का बाहुल्य साहित्यिक चिंता का विषय है। मन्नू भंडारी का 'महाभोज' चित्रा मुदगल का 'आवा' और मैत्रेयी पुष्पा का 'इदन्नमम' इसी सामाजिक चेतना के

प्रमाण हैं। 1978 में प्रकाशित मन्नू भंडारी का 'महाभोज' एक प्रतिबद्ध रचना है। संक्षेप में कथानक इस प्रकार है: एक हरिजन युवक की हत्या हो जाती है। यह हत्या किस प्रकार होती है और इसे छिपाने के लिये कैसे कैसे हथकण्डे अपनाये जाते हैं, कैसी राजनीतिक चालें चली जाती हैं उनका सूक्ष्म चित्रण इस उपन्यास में हुआ है। उपेक्षित हरिजन बस्तियों में आगजनी, हत्याकाण्ड एवं अनेक प्रकार के शोषण की घटनायें आज भी समाचार पत्रों में पढ़ने और टेलीविजन में देखने को मिलती हैं। चुनावों की राजनीति चुनावी मशीनरी में तब्दील हो जाने के कारण जिस प्रकार की देश दशा का निर्माण हुआ है उसके मध्य आम आदमी की त्रासदी, करुणा, ममता, संघर्ष, पीड़ा की सच्चाई को एक से अनेक संदर्भों के सहित 'महाभोज' में लेखिका ने प्रस्तुत किया है।

मैत्रेयी पुष्पा के 'इदन्नमम' उपन्यास की पृष्ठभूमि बुंदेलखंड के समृद्ध खेतिहर परिवार हैं। उपन्यास की नायिका मंदाकिनी का एक पराश्रित, विनम्र कन्या से आत्मनिर्भर, संघर्षशील युवती में परिवर्तन जहाँ एक ओर नारी के सशक्तीकरण पर प्रकाश डालता है वहीं ग्रामीण जीवन में स्वार्थों का टकराव, व्यक्तिगत हितों के लिये सामाजिक हितों का बलिदान और विकास कार्यों में बाधक असामाजिक तत्व जो निजी हितों के लिये किसी व्यक्ति की जान भी ले सकते है- इस सबका प्रभावशाली चित्रण हुआ है। राजेन्द्र यादव ने इस उपन्यास की तुलना फणीश्वरनाथ रेणु के उपन्यास 'मैला आंचल' से की है। आंचलिक उपन्यासों की श्रृंखला में यह उपन्यास अत्यन्त महत्वपूर्ण है। चित्रा मुद्गुल का बहुचर्चित, व्यास सम्मान से सम्मानित उपन्यास 'आवा' महिला सशक्तीकरण के क्रिटीक के रूप में देखा जा सकता है जहाँ एक तथाकथित सशक्त नारी एक ट्रेड यूनियन की सक्रिय कार्यकर्ता के शोषण की पर्त दर पर्त खोलती है।

अभी तक हमने लेखिकाओं के उन्हीं सामाजिक सरोकारों की चर्चा की है जो समाज की मुख्यधारा से संबंधित हैं। जब हम एक आदर्श समाज की परिकल्पना करते हैं तो एक ऐसे समाज की परिकल्पना करते हैं जो वर्ग जाति विहीन हो, जहाँ हाशिये पर स्थित लोगों को भी मुख्य धारा में सम्मिलित कर जीवन की समान सुविधायें समान अधिकार प्राप्त हों। दलित, आदिवासी, पिछड़ी जनजातियाँ, मजदूर, श्रमिक, स्त्रियाँ, किसान इसी वर्ग का प्रतिनिधित्व करते है। जिन्हें हम सब-आल्टर्न (Subaltern) सर्वहारा, पिछड़े लोगों की संज्ञा देते हैं जो आज भी मुख्यधारा में सम्मिलित नहीं हो पाये हैं। इस श्रृंखला में अग्रणी नाम महाश्वेता देवी का है। उनका लेखन और सामाजिक सक्रियता एक दूसरे के पूरक हैं।

अपनी पत्रिका 'वर्तनिका' के माध्यम से सिंगूर और नन्दीग्राम में पश्चिमी बंगाल सरकार की औद्योगिक नीतियों के विरुद्ध एवं किसानों की हत्याओं के विरुद्ध जनाधार बनाने में उनकी क्रांतिकारी भूमिका रही है। उनके उपन्यास 'रुदाली' में सामन्ती प्रथा पर करारा प्रहार है जहाँ मृत्यु और प्रलाप का भी बाजारीकरण हो जाता है, वहीं 'स्तनदायिनी' शोषण का एक दूसरा आयाम प्रस्तुत करती है। उनकी सर्वाधिक चर्चित कहानी 'द्रौपदी' चर्चा में रही है जहाँ पर इस सर्वहारा वर्ग की भाषा का विहंगम रूप देखने को मिलता है। सेनानायक द्वारा पीड़ित क्षत-विक्षत द्रौपदी जब नंगी उसके समक्ष उपस्थित होती है और कपड़ा पहनने से इंकार कर देती है तो सेनानायक प्रतिकार के इस विचित्र रूप के समक्ष परास्त हो जाता है। इस मूक चुप्पी को भाषा की प्रसिद्ध आलोचक गायत्री चक्रवर्ती स्पिवाक ने सबआल्टर्न (Subaltern) संवाद की संज्ञा दी है। महाश्वेता देवी की अन्य रचनाओं जैसे 'हजार चौरासी की माँ', 'आरण्यर अधिकार' आदि ने आदिवासियों की समस्याओं को हाशिये से मुख्यधारा में जोड़कर लेखन को नयी दिशा दी है। इसी श्रृंखला में अरुन्धती राय के उपन्यास 'द गॉड ऑफ स्माल थिंग्स्' को सम्मिलित किया जा सकता है जो केरल के एक छोटे से सीरियाई ईसाई बहुल समाज में एक दलित युवक वेलुथा और एक सीरियाई ईसाई युवती अम्मू की असफल प्रेम कथा के माध्यम से इस समाज के कई अन्य अनदेखे पहलुओं की भी समीक्षा करता है जैसे कि कम्युनिस्टों के दोहरे मापदण्ड, दलितों का शोषण, भ्रष्ट पुलिस, एक विघटित परिवार में बच्चों का जीवन। इसी श्रृंखला में हम मंजुला भगत के उपन्यास 'अनारो' को भी रख सकते हैं जो घरेलू कामकाज करने वाली महरी अनारो के संघर्ष की ओर समाज का ध्यान आकर्षित करती है जिसका संघर्ष और जिजीविषा प्रशंसनीय हैं। अल्का सरावगी का साहित्य अकादमी पुरस्कृत प्रथम उपन्यास 'कलि कथा-वाया बाईपास' भी बंगाल में निवास कर रहे एक मारवाड़ी परिवार की कहानी है जिसका मुख्य पात्र कमल बाईपास के पश्चात् एक ऐसी मन:स्थिति में है जहाँ अक्सर व्यक्ति विशेष को पागलखाने भेज दिया जाता है। 'स्मृति भ्रंश' की स्थिति में बाबू मारवाड़ी बंगाल और देश के इतिहास की झलक दिखलाने में सफल हुये है। उपन्यास का मुख्यपात्र एक पुरुष है और लेखिका ने अत्यन्त कुशलता से एक पुरुष पात्र के मनोभावों का चित्रण किया है।

आज के भूमंडलीकरण के दौर में अंग्रेजी एक वैश्विक भाषा के रूप में विश्वपटल पर उभरी है। यह सच है कि अंग्रेजी जहाँ एक ओर संवाद स्थापित करने में सेतु बनी है वहीं यह भी सच है कि इस भाषा के साहित्य प्रचार, प्रसार ने अनेकानेक छोटी बड़ी भाषाओं एवं

उनके साहित्य के अस्तित्व पर ही प्रश्न चिन्ह लगा दिये हैं। भारतीय महिला लेखिकाओं के सामाजिक सरोकार उनकी जमीन से जुड़े हैं। यह बहुभाषा साहित्य वह साहित्य है जिसके पाठक चिलचिलाती धूप में साइकिल, रिक्शाओं या फिर बस में सवारी करने वाले आम लोग होते हैं। आज आवश्यकता इस बात की है कि इस समाज से जुड़े समाज के लिये लिखे जाने वाले साहित्य का प्रचार एवं प्रसार किया जाये जिसके लिये एक सुगठित, सुचालित तंत्र की आवश्यकता है। एक आम लेखक की रचना एक आम पाठक तक कैसे पहुंचे और एक आम लेखक या लेखिका की उर्जा कैसे जीवित रहे इसके लिये हमें बाजार को समझना होगा जहां पुस्तक महज एक वस्तु है जो अर्थशास्त्र के सामान्य नियम माँग और पूर्ति से प्रभावित होकर खरीदी और बेची जाती है। जिस प्रकार लेखकों का समाज के प्रति एक दायित्व होता है उसी प्रकार समाज का भी लेखक के प्रति दायित्व है। लेखक, पाठक, प्रकाशक और प्रचारक- यह चारों चौपाये यदि साथ मिलकर काम करें तो साहित्य को निःसंदेह क्रांतिकारी दिशा मिल सकती है।

उत्तराखण्ड के साहित्य की यदि बात करें तो उत्तराखण्ड के साहित्य की एक समृद्ध धरोहर और परम्परा रही है। यहाँ की अनुपम प्राकृतिक छटा को सुमित्रा नन्दन पन्त की कविताओं ने अमरत्व प्रदान किया। उत्तराखण्ड मूल के प्रवासी साहित्यकारों की लम्बी सूची है। उत्तराखण्ड राज्य की स्थापना के पश्चात साहित्य क्षेत्र में निःसन्देह एक नवीन ऊर्जा का संचार हुआ है और यहाँ की महिलाओं की साहित्यिक पटल पर सक्रियता बढ़ी है। यहाँ की लेखिकाओं में गौरा पन्त 'शिवानी' व मृणाल पांडे इन माँ-पुत्री की रचनाओं को राष्ट्रीय स्तर पर पहचान और प्रशंसा मिली है। विशेषकर शिवानी के उपन्यास 'श्मशान चंपा' और 'कृष्णकली' में भाषा का तिलिस्म और परिवेश का चित्रण साहित्य की विशेष उपलब्धि कही जा सकती है। उत्तराखण्ड मूल की लेखिकायें नमिता गोखले और दीपा अग्रवाल अंग्रेजी में लिख रही हैं। लेखन के अतिरिक्त प्रकाशन में भी नमिता गोखले सक्रिय हैं और जयपुर लिटरेरी फैस्टिवल जैसे आयोजनों से संबद्ध हैं। दीपा अग्रवाल ने राजुला मालूशाही की लोकगाथा की पुनर्रचना की है।

उत्तराखण्ड की अधिकांश लेखिकायें हिन्दी तथा पहाड़ी भाषा में लिख रही हैं आवश्यकता है तो एक मंच और संगठित तंत्र की। उमा भट्ट द्वारा संपादित महिला पत्रिका 'उत्तरा' ने यहाँ की लेखिकाओं को मंच प्रदान किया है लेकिन हमें प्रकाशन तंत्र को और अधिक व्यापक बनाना है ताकि यहाँ की रचनाओं को राष्ट्रीय पटल पर पहचान मिले। मैं

डॉ. मधु डी. सिंह की आभारी हूँ उनके माध्यम से वीणापाणी जोशी, भारती पांडे, दिवा भट्ट, गीता नौटियाल, विद्या सिंह, सुमित्रा काला, सावित्री नौटियाल, बीना बेंजवाल, नीता कुकरेती, कुसुम भट्ट, बीना कंडारी, उमा जोशी इत्यादि के कृतित्व से परिचय हुआ। श्री गुरु राम राय (पी.जी.) कॉलेज देहरादून का वीमैन्स स्टडीज सैन्टर साहित्यिक गोष्ठियों के आयोजन तथा महिला लेखिकाओं की रचनाओं के हिन्दी, अंग्रेजी में अनुवाद तथा प्रकाशन द्वारा एक सराहनीय कार्य कर रहा है जिसके लिये मैं मधु डी सिंह को साधुवाद देती हूँ और आशा करती हूँ कि उनका यह प्रयास नये आयाम तक पहुँचेगा।

प्रो. जयवन्ती डिमरी
पूर्व अध्यक्ष, अंग्रेजी विभाग
एच.पी. यूनिवर्सिटी शिमला
पूर्व फैलो, आईआईएएस शिमला

भूमिका

हमारे महाविद्यालय के वीमैन्स स्टडीज सैन्टर द्वारा 18 अगस्त 2011 को एक संगोष्ठी का आयोजन किया गया था जिसका विषय था "उत्तराखण्ड के साहित्यिक परिदृश्य में महिला सहित्यकार।" इस विषय के अन्तर्गत कुछ उपविषय भी रखे गऐ थे जैसे कि:-

- उत्तराखण्ड के साहित्य में महिलाओं का योगदान
- उत्तराखण्ड लोक साहित्य में नारी का चित्रण
- क्षेत्रीय भाषाओं में रचित साहित्य का अनुवाद: एक आकलन
- अनुवाद साहित्य : अनुवाद, मुद्रण, प्रकाशन, वितरण : उपलब्धियाँ व कठिनाइयाँ
- रचना धर्मिता और समाज
- भाषा और शैली : परम्परा बनाम परिवर्तन

इस संगोष्ठी में उत्तराखण्ड की अनेक विदुषी लेखिकाओं तथा कवयित्रियों ने भाग लिया और मुख्य विषय के भिन्न-भिन्न पहलुओं को समाहित करते हुए अपने शोधपूर्ण लेख पढ़े।

यहाँ सुधी पाठकों को यह अवगत कराना चाहूंगी कि SGRR Women's Studies Centre वर्ष 2010 में प्रारम्भ हो गया था। चूंकि यूजीसी के दिशानिर्देशानुसार प्रत्येक केन्द्र को अपने मुख्य कार्यक्षेत्र का चुनाव करना होता है इसलिए हमारे केन्द्र ने ट्रेनिंग, डाक्यूमैन्टेशन के अलावा शोध, अनुवाद तथा प्रकाशन को अपना मुख्य कार्यक्षेत्र बनाया तथा इस दिशा में कार्य भी आरम्भ कर दिया।

उत्तराखण्ड की महिलाओं ने अन्य क्षेत्रों की भांति साहित्य के क्षेत्र में भी प्रचुर योगदान दिया है, यह तथ्य सम्भवत: सर्वविदित नहीं है, इसीलिए कुछेक प्रसिद्ध नामों को छोड़कर अधिकांश लेखिकायें या तो अप्रकाशित हैं और यदि प्रकाशित हैं भी तो भी उनकी कृतियाँ, उनका योगदान राष्ट्रीय स्तर पर साहित्य की मुख्यधारा में सम्मिलित होने से वंचित रह गया है। इसी विसंगति को ध्यान में रखते हुए यह संगोष्ठी आयोजित की गई थी। इस संगोष्ठी के द्वारा यह आकलन करने का प्रयास किया गया कि आखिर कितनी महिला साहित्यकारों ने अपने व्यक्तित्व व कृतित्व से उत्तराखण्ड की साहित्यिक सम्पदा को समृद्ध किया है।

संयोगवश इस संगोष्ठी में जिन साहित्यकारों ने परिचर्चा की, वे स्वयं भी जानी मानी साहित्यकार हैं। उन्होंने अपने लेखों में अनेकानेक कवयित्रियों/लेखिकाओं के सम्बन्ध में शोधपूर्ण जानकारी देते हुए अपने-अपने दृष्टिकोण से मुख्य विषय तथा उपविषयों की व्याख्या की।

वीणापाणी जोशी ने अपने विस्तृत तथा शोधपूर्ण आलेख में उत्तराखण्ड की प्रथम महिला साहित्यकार श्रीमती विद्यावती डोभाल के व्यक्तित्व के अनेक पहलुओं को उजागर करते हुए अन्य प्रसिद्ध महिला लेखिकाओं जैसे शिवानी, मृणाल पांडे, नमिता गोखले के अतिरिक्त अनेकों साहित्यकारों की लम्बी सूची प्रस्तुत की है जिसमें अप्रवासी कवयित्रियों, उपन्यासकारों के अलावा महिला सम्पादिकाओं का भी उल्लेख है। आपके शब्दों में उत्तराखण्ड नवोदित राज्य निर्माण (9-11-2000) के बाद तो निश्चय ही एक नई चेतना, नई उमंग और साथ ही महत्वाकांक्षा पनपी। महिलायें पंचायत चुनाव में विजयी हुईं तथा राजनीति में आईं। अत: अपनी जन्मभूमि के लिए खट्टे-मीठे-तीखे अनुभवों पर आधारित, मद्य रहित, व्यसन विहीन, भ्रष्टाचार रहित और प्रति व्यक्ति रोजगारपरक राज्य की कल्पना उत्तराखण्ड की नारी के मानस पटल पर बदस्तूर कायम है। एक उज्ज्वल भविष्य की कामना के साथ संप्रति उत्तराखण्ड की साहित्यकार नारी पावन सृजन में दृढ़ता से संलग्न है।

सुमित्रा धूलिया ने अपने शोधपूर्ण आलेख में संगोष्ठी के शीर्षक को तीन भागों में बांटते हुए विभिन्न दृष्टिकोणों से मुख्य विषय की विवेचना की है। उन्होने अपने आलेख में समयवार लेखिकाओं का ब्यौरा देते हुये श्रीमती विद्यावती डोभाल से लेकर श्रीमती चन्द्रावती लखनपाल, श्रीमती लक्ष्मी देवी टम्टा, डा॰ दयमन्ती कपूर, गौरा पन्त 'शिवानी' सरीखी वरिष्ठ लेखिकाओं के विषय में प्रकाश डालते हुए स्वातंत्रोत्तर काल की लेखिकाओं जैसे मृणाल पांडे, दीक्षा बिष्ट, पुष्पा भट्ट, अजरा खान तथा डा॰ शशिप्रभा शास्त्री के कृतित्व को इंगित किया है। विशेष बात यह है कि इन्होंने अपनी विवेचना के दायरे में सम्पादकत्व और रिपोर्ताज को भी लेते हुए सम्पादन, शोध तथा पुरानी गीत विधाओं में उत्तराखण्ड की महिलाओं के योगदान पर प्रकाश डाला है।

विद्या सिंह ने अपने प्रबुद्ध आलेख में संगोष्ठी के उपविषय 'रचना धर्मिता और समाज' को चुनते हुये रचना धर्म की सूक्ष्म विवेचना की है। आपके अनुसार "साहित्य शब्दों के बहुआयामी प्रयोगों द्वारा जिंदगी के दबावों से मुक्त करके एक समानान्तर इच्छालोक रचता है। मुक्ति और रचना का यह दोहरा अहसास यथार्थ से पलायन नहीं, अदम्य जीवन शक्ति

का परिचायक है, जो साहित्य और कलाओं की रचनाशीलता में प्रकट होता है। यही सृजन है, यही रचना है और रचनाकर्म ही रचनाधर्मिता है।" साहित्य की सामाजिक उपयोगिता के पक्ष को इंगित करती हुई आप लिखती हैं कि "साहित्य की सामाजिक भूमिका की अनदेखी नहीं की जा सकती। यही कारण है कि वंचितों और पीड़ितों की पक्षधरता में रचे गये साहित्य को जनमानस युगों-युगों तक महत्व देता है, जैसे कबीर, तुलसी और प्रेमचंद का साहित्य।" आलेख के उपसंहार में आपने ठीक ही कहा है कि "परतों के भीतरी दरारों में छिपे-बैठे वजनदार अमूर्त सत्य को सतह पर लाना रचना धर्मिता की चुनौती है।"

कृष्णा खुराना ने अपने विवेचना पूर्ण आलेख में उत्तराखण्ड की महिला रचनाकारों के मुख्य सरोकारों की समीक्षा करने से पहले अपने फलक को वैश्विक स्तर पर विस्तारित करते हुये समूचे विश्व में जानी मानी लेखिकाओं और नारीवादी चिन्तकों जैसे- मैक्सिम गोर्की, टॉल्सटॉय, ब्रेख्त, चेखव, सिमोन दि बुआ, जियां पाल सार्त्र, एलडुअस हक्सले, सिंक्लेयर, मोंखेज, वर्जिनिया वुल्फ, जर्मेन ग्रीयर, ऑस्कर वाइल्ड आदि के क्या-क्या मुख्य सरोकार रहे हैं इस पर प्रकाश डाला है। इसी प्रकार उत्तराखण्ड की वर्तमान महिला साहित्यकारों की चर्चा करने से पहले उन्होंने वैदिक साहित्य तथा उत्तर वैदिक साहित्य में महिलाओं की विरोधाभासी स्थितियों का जिक्र किया है जिसमें एक ओर तो **यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते, रमन्ते तत्र देवता:** जैसी नारी को देवतुल्य स्थान देने वाली अवधारणा है तो दूसरी और नारी को पिता, पति तथा पुत्र के आधीन करने वाली मनु स्मृतीय व्यवस्था भी है। इन सभी विरोधाभासों के बावजूद कैसे युग दर युग महिलाओं ने साहित्य सृजन किया इसकी कृष्णा खुराना ने विस्तार से पड़ताल की है। उत्तराखण्ड की विभिन्न लेखिकाओं यथा- शिवानी, मृणाल पांडे, अर्चना पैन्यूली, शशी प्रभा शास्त्री, कुसुम चतुर्वेदी, कुसुम भट्ट समेत अनेक रचनाकारों व उनके सरोकारों पर भी प्रकाश डाला है। इनके शब्दों में "शिक्षा-दीक्षा, कैरियर रोजगार परम्पराओं और मान्यताओं की प्रासंगिकता को चुनौती, स्त्री पुरुष सम्बन्धों की नये सिरे से पड़ताल और परिभाषा आदि युवा महिला रचनाकारों के सरोकार बन रहे हैं।"

बसन्ती मठपाल ने अपने आलेख 'उत्तराखण्ड के परिदृश्य में महिला साहित्यकार' में सटीक विवेचना करते हुए उत्तराखण्ड की उन विषम भौगोलिक परिस्थितियों का जिक्र किया है जिनके चलते पुरुषों को शिक्षा व नौकरी के लिए बाहर जाना पड़ा और धीरे-धीरे अर्थ तंत्र पर उसका अधिकार होता चला गया और स्त्री की स्थिति उतनी ही कमजोर होती

चली गई। फिर भी वह अपने अनुभवों, संवेदनाओं को लोक गीतों के रूप में पिरोकर समाज को देती रही जो बसंती मठपाल के शब्दों में "हिन्दी साहित्य की स्वर्णिम निधि है जिनमें शैल पुत्रियों का जीवन अत्यन्त सजीवता व मार्मिकता के साथ उभर कर आया है। शिक्षण, प्रशिक्षण, पठन-पाठन की समुचित व्यवस्था के अभाव में इन नारियों की अभिव्यक्ति लोकगीतों तक ही सिमट कर रह गई अन्यथा इन सरल प्राण महिलाओं के मन-मानस से महाकाव्यों की समृद्ध परम्परा का जन्म होता" ऐसा बसंती मठपाल दृढ़ विश्वास से कहती हैं। इन्होंने अपने आलेख में समाज सुधार क्षेत्र में सक्रिय अनेकानेक महिला साहित्यकार यथा- चन्द्रावती पंवार, रामेश्वरी सजवाण, बसंती देवी, तारा प्रकाश, उर्मिला भट्ट, विमला बहुगुणा, मंगला देवी का उल्लेख करते हुए विशुद्ध साहित्य सृजन क्षेत्र में सक्रिय महिला साहित्यकारों में मुख्य नामों के अतिरिक्त पुष्पा मानस, कुसुम भट्ट, कुसुम डोभाल, अल्पना मिश्र, हेमा उनियाल, चमेली जुगरान, आशा जुगरान, डॉ. सुधा पांडे, सुलोचना परमार, मधु मैखुरी, सुभागा बिष्ट समेत अनेक महिला साहित्यकारों का सन्दर्भ दिया है। आपका कहना है "चाहे वह विशुद्ध साहित्य हो, पत्रकारिता हो या नैसर्गिक ग्राम्य गीत- सब में उत्तराखण्डी स्त्री का संवेदनशील हृदय, कल्पना की समाहार शक्ति व मस्तिष्क की प्रखर मेधा का चमत्कृत रूप ही दृष्टिगत होता है।"

सावित्री काला ने अपने आलेख 'रचना धर्मिता और समाज' में वर्तमान में रचना धर्मिता के बदलते रूप पर चिन्ता प्रकट की है। रचना धर्मिता की ऐतिहासिक सन्दर्भ में पड़ताल करते हुए आपने लिखा है कि उत्तराखण्ड की रचनाधर्मिता आजादी की लड़ाई के साथ ही प्रारम्भ हो गई थी। आपका मानना है कि एक विवेकशील अन्तर्दृष्टि सम्पन्न रचनाकार ही सच्ची रचना धर्मिता को पहचान पाता है किन्तु विडम्बना यह है कि आज के समय में रचनाधर्मिता का विवेक शनैः शनैः लुप्त होता जा रहा है, तभी तो ऐसी रचनायें प्रकाशित हो रही हैं जिन से हमारा समाज विघटित हो रहा है। आपके अनुसार "रचना धर्मियों का यह कर्तव्य है कि वे ऐसी कहानियां, कवितायें व लेख लिखें जिससे समाज में जन जागृति हो सके, लोग अपने अधिकारों को जान सकें। रचनाधर्मिता का यह मूल मंत्र रचनाकारों को समझना चाहिए कि वे समाज को किस ओर ले जाना चाहते हैं विकास की ओर या विनाश की ओर- इस ज्वलंत प्रश्न का निराकरण होना ही चाहिए।"

नीता कुकरेती ने संगोष्ठी के उपविषय 'उत्तराखण्ड लोक साहित्य में नारी का चित्रण' पर आधारित अपने शोधपूर्ण आलेख में उत्तराखण्ड के साहित्य की उद्भव और विकास यात्रा

पर विहंगम दृष्टिपात करते हुए, विशेष रूप से इसके लोक साहित्य की समृद्धि को रेखांकित किया है। आपके शब्दों में "लोक साहित्य जातीय चरित्र के अध्ययन का स्त्रोत है क्योंकि लोक साहित्य में ही किसी समाज के हर्ष उल्लास, सुख-दु:ख, रहन-सहन, आचार-व्यवहार, रीति रिवाज व संस्कृति के दर्शन होते हैं।" उत्तराखण्ड के लोक साहित्य की विभिन्न विधाओं जैसे धार्मिक गीत (मांगल) ऋतु गीत (बासंती, थड्या, होरी, चौमासा, बारामासा इत्यादि) श्रृंगार गीत तथा खुदेड़ गीत आदि में नारी के विभिन्न रूपों का, उसके अन्तर्मन की कोमल भावनाओं का जो सजीव चित्रण मिलता है उसका उदाहरण सहित वर्णन तो नीता कुकरेती के आलेख में है ही, साथ ही उत्तराखण्ड की लोक गाथाओं जैसे जागर गाथाओं, वीर गाथाओं, प्रणय गाथाओं तथा चैती गाथाओं में नारी की जीवटता, त्याग व साहस तथा उसके चारित्रिक आदर्शों की उचांइयों का कैसा वर्णन है- इसकी भी विस्तार से विवेचना की गई है।

भारती पाण्डे ने अपने आलेख हेतु संगोष्ठी का उपविषय 'भाषा और शैली: परम्परा बनाम परिवर्तन' चुनते हुए कुमाउंनी भाषा और शैली की शोधपूर्ण विवेचना की है। आपने कुमांउनी भाषा की उत्पत्ति और विकास के इतिहास की अपने लेख में विस्तार से पड़ताल की है और इस भाषा में प्रचलित मुहावरों तथा लोकोक्तियों के सटीक उदाहरण प्रस्तुत किये हैं, साथ ही इसकी विभिन्न शैलियों जैसे सुकुमार शैली के अन्तर्गत वर्णनात्मक, चित्रात्मक, भावात्मक तथा गेयात्मक शैली, विदग्ध शैली के अन्तर्गत हास्य व्यंग्य प्रधान, प्रतीक रूपक प्रधान तथा मुहावरा लोकोक्ति प्रधान शैली के समुचित उदाहरण देते हुए विषय का प्रतिपादन किया है।

रजनी कुकरेती ने अपने आलेख "नरेन्द्र सिंह नेगी के गीतों उत्तराखण्ड की नारी का चित्रण" में संगोष्ठी के उपविषय 'उत्तराखण्ड के साहित्य में नारी का चित्रण' को एक नई दृष्टि से प्रस्तुत करने का प्रयास किया है। उत्तराखण्ड के सुप्रसिद्ध लोकगायक नरेन्द्र सिंह नेगी के बारे में ये लिखती है कि उनके गीतों की समीक्षा करते हुए साहित्य व कला के मर्मज्ञ अभिभूत हो जाते हैं। ''पहाड़ी जीवन का शायद ही कोई ऐसा पहलू हो जो श्री नेगी जी की नजरों से बच पाया हो। विस्थापन की पीड़ा झेलते हुए टिहरी के किसी बुजुर्ग का बयान हो, विरह में व्याकुल पत्नी की व्यथा का गान हो या अपनी प्रिय बेटी का इन्तजार करती किसी माँ का दुखड़ा- उनके गीतों को सुनकर कौन कल्पना कर पायेगा कि रचनाकार न तो कोई स्त्री है और न ही उन परिस्थितियों से गुजरा कोई व्यक्ति।''

साधना शर्मा ने अपने आलेख 'उत्तराखण्ड की महिला साहित्यकार' में विश्व विख्यात लेखिका शिवानी से लेकर वीणापाणी जोशी, सावित्री नौटियाल काला 'सवि', उमा जोशी, विद्या सिंह, भारती पाण्डेय, बीना बेंजवाल, नीता कुकरेती, राजेश कुमारी, नीलम प्रभा वर्मा, कमलेश्वरी मिश्रा, सुमित्रा धूलिया, कुसुम भट्ट, लक्ष्मी उपाध्याय, कृष्णा खुराना आदि प्रसिद्ध लेखिकाओं, कवयित्रियों के साहित्य संसार की चर्चा की है। आपके अनुसार "इन महिला साहित्यकारों के कारण ही नित प्रतिदिन साहित्य सृजन की अविरल धारा बह रही है।"

गीता नौटियाल ने 'उत्तराखण्ड के लोक साहित्य में नारी का चित्रण' नामक आलेख में इस विषय की विशद तथा विवेकपूर्ण विवेचना की है। केशवानन्द कैंथोला, प्रेमवल्लभ पुरोहित 'राही', भगत सिंह भंडारी, विमल पोखड़ा 'साहित्य रत्न' सिद्धीलाल विद्यार्थी, कैलाश बहुखण्डी, दुर्गा प्रसाद घिल्डियाल, श्रीधर जमलोकी, केशवानन्द ध्यानी, कुलानन्द भारती सरीखे कवियों के अलावा उमा भट्ट, बीना बैंजवाल, वीणापाणी जोशी, नीता कुकरेती आदि कवयित्रियों की रचनाओं का उदाहरण देते हुए आपने उत्तराखण्ड की नारी के व्यक्तित्व के विविध आयामों का सजीव चित्रण किया है।

उपरोक्त आलेखों के मुख्य चर्चा बिन्दुओं पर विहंगम दृष्टि डालने से स्पष्ट है कि इस संगोष्ठी के माध्यम से मूल्यवान शोध सामग्री- यथा उत्तराखण्ड के साहित्य में यहाँ की महिलाओं का क्या योगदान है चाहे साहित्यकार के रूप में चाहे साहित्य के विषय के रूप में- संकलन हो गया। इसलिये यह विचार अंकुरित होना स्वाभाविक ही था कि क्यों न इस विदुषी लेखिकाओं के इस विचार प्रवाह को पुस्तक रूप में संकलित कर इस महत्वपूर्ण धरोहर को संरक्षित किया जाये। यद्यपि इस विचार को मूर्त रूप देने में काफी समय लग गया। किन्तु अंततः इस पुस्तक का प्रकाशन हो रहा है, यह एक सुखद अनुभूति है।

सर्वप्रथम अपने महाविद्यालय की प्रबन्ध समिति के सचिव श्रीमहन्त देवेन्द्र दास जी महाराज का हार्दिक आभार जिन्होंने अपने आशीर्वचनों से वीमैन्स स्टडीज़ सैन्टर के इस प्रयास को सिंचित किया। साथ ही प्राचार्य प्रो. वी.ए. बौड़ाई का भी बहुत धन्यवाद उनके उत्साहवर्धक शब्दों के लिए। आपका कुशल मार्गदर्शन तथा समयोचित परामर्श वीमैन्स स्टडीज सैन्टर को सदैव उपलब्ध रहता है। तत्पश्चात् विशेष धन्यवाद प्रो. जयवन्ती डिमरी (पूर्व विभागाध्यक्ष अंग्रेजी विभाग, हिमाचल यूनीवर्सिटी, शिमला) का जो स्वयं एक जानी

मानी लेखिका हैं, जो हिन्दी तथा अंग्रेजी दोनों भाषाओं में लिखती हैं तथा जिनके अनेक कहानी संग्रह, उपन्यास व पुस्तकें प्रकाशित व पुरस्कृत हो चुके हैं। उन्होंने सदैव एस जी आर आर वीमैन्स स्टडीज सैन्टर के लिए एक वरिष्ठ दिग्दर्शक की भूमिका सहजता और स्नेहपूर्वक निभाई है चाहे वह गढ़वाली/कुमांऊनी भाषाओं से हिन्दी/अंग्रेजी में अनुवाद का कार्य हो, चाहे कोई संगोष्ठी की परिकल्पना- इन सभी में प्रो. डिमरी का सतत योगदान रहा है। इस पुस्तक के प्राक्कथन लिखने के मेरे अनुरोध को उन्होंने जिस सरलता से स्वीकार किया वह हमारे महाविद्यालय के वीमैन्स स्टडीज सैन्टर के प्रति उनके स्नेह को दर्शाता है। श्रीमती नीता कुकरेती की भी मैं विशेष आभारी हूँ जिन्होंने कई आलेखों में उद्धृत गढ़वाली तथा कुमाऊंनी भाषा की पंक्तियों का हिन्दी में अनुवाद किया।

अब जबकि यह पुस्तक आपके हाथों में है तो मैं एक बार फिर उन सभी विदुषी लेखिकाओं का आभार व्यक्त करती हूँ जिनके शोध और श्रम के फलस्वरूप यह सामग्री एकत्रित हो पाई। स्वयं मेरे लिए संगोष्ठी के माध्यम से इतनी लेखिकाओं से आत्मीय परिचय एक अवस्मिरणीय अनुभव रहा है। किसी भी लेखन सामग्री को प्रकाशन के सोपान तक लाना नि:सन्देह एक श्रमसाध्य प्रक्रिया है। इस प्रक्रिया में सुश्री मधु मिश्रा (डाक्यूमेन्टेशन ऑफिसर एसजीआरआर वीमैन्स स्टडीज सैन्टर) ने प्रूफ रीडिंग में सहयोग दिया उसके लिए उनको भी साधुवाद। हमारे इस प्रयास में कहीं न कहीं त्रुटियां अवश्य रह गई होंगी, उनके लिए क्षमा याचना करते हुए आशा करती हूँ कि इस पुस्तक से उत्तराखण्ड की महिला साहित्यकारों तथा उनके सृजन संसार की एक झलक सुधी पाठकों को देखने को मिलेगी तथा हम अपने केन्द्र द्वारा निर्धारित लक्ष्य (उत्तराखण्ड की महिला साहित्यकारों की रचनाओं का संकलन, डाक्यूमेंटेशन, अनुवाद तथा प्रकाशन) की दिशा में एक कदम और आगे बढ़ेंगे।

मधु डी सिंह

अनुक्रमणिका

उत्तराखण्ड के साहित्य में महिलाओं का योगदान
वीणापाणी जोशी 1

रचनाधर्मिता और समाज
डॉ॰ विद्या सिंह 15

उत्तराखण्ड के साहित्यिक परिदृश्य में महिला साहित्यकार
सुमित्रा धूलिया 20

उत्तराखण्ड लोक साहित्य में नारी का चित्रण
नीता कुकरेती 25

महिला रचनाकारों के मुख्य सरोकार
कृष्णा खुराना 33

उत्तराखण्ड के परिदृश्य में महिला साहित्यकार : एक अवलोकन
डॉ॰ बंसती मठपाल 41

भाषा और शैली: परम्परा बनाम परिवर्तन
भारती पाण्डे 47

रचना धर्मिता की दिशा: वर्तमान परिप्रेक्ष्य में
सावित्री काला 55

नरेन्द्र सिंह नेगी के गीतों में नारी का चित्रण
रजनी कुकरेती 58

उत्तराखंड की नारी और साहित्य
साधना शर्मा 63

उत्तराखण्ड लोक साहित्य में नारी का चित्रण
डॉ. गीता नौटियाल "मासान्ती " 67

साहित्यकारों का परिचय 79

उत्तराखण्ड के साहित्य में महिलाओं का योगदान

❑ वीणापाणी जोशी

20वीं सदी के पूवार्द्ध में जब देश परतंत्र था उस समय सम्पूर्ण राष्ट्र में देशभक्तों द्वारा स्वाधीनता के लिए राष्ट्रीय संचेतना की अलख जगाई जा रही थी, जिसमें गिनती की महिलायें ही वैचारिक धरातल पर कार्य सक्षम थीं। यदि उत्तराखण्ड की बात करें तो सम्प्रेष्णाभाव, प्राकृतिक-भौगोलिक विषमताएँ, पुरुष पलायन तथा स्त्री पर सम्पूर्ण पारिवारिक, सामाजिक तथा आर्थिक उत्तरदायित्व का बोझ, शिक्षा का अभाव आदि इन सब कारणों से साहित्य सृजन के क्षेत्र में महिलायें बहुत आगे नहीं बढ़ पाईं। फिर भी हम गर्व से नाम लेंगे उत्तराखण्ड की प्रथम साहित्यकार श्रीमती विद्यावती डोभाल का- लेखन के क्षेत्र में प्रवर्तक नारी।

स्वतंत्रता से पूर्व तो वातावरण ही दूसरा था, विशेषकर उत्तराखण्ड की प्राकृतिक और भौगोलिक स्थिति के कारण महिला को अपने दैनिक कार्यों से ही अवकाश नहीं मिलता था। साहित्य सृजन कल्पना से परे था, लेखन का तो प्रश्न ही नहीं उठता। ऐसे में गिनी-चुनी भारतीय महिलाओं ने ही लेखन कार्य किया। उत्तराखण्ड गढ़वाल में श्रीमती विद्यावती डोभाल पहली महिला साहित्यकार थीं जिन्होंने कठिन संघर्ष के बाद शिक्षा प्राप्त कर समाज से छिपकर लेख और कवितायें लिखीं। टिहरी गढ़वाल में सम्पन्न माफीदार घराने की बहु विद्यावती "समाज पीड़िता" नाम से लेखन करती थीं। उन्हें डर था कि घर में किसी को पता न चल जाये, इसलिए वे वास्तविक नाम से नहीं लिखती थीं। विद्यावती डोभाल की प्रकाशित पुस्तकों के नाम इस प्रकार हैं-

1. श्रीमती मंगला देवी की जीवनी
2. एवरेस्ट के देवता
3. तीन गढ़वाली गीतिका
4. खण्डूड़ी कुल की विभूतियाँ (उत्तराखण्ड के पूर्व मुख्यमंत्री जनरल भुवन चन्द्र खण्डूड़ी इसी वंश के हैं)
5. अमृत की बूंदें

जब देश में सरोजिनी नायडू, सुचेता कृपलानी, विजयलक्ष्मी पण्डित, अरुणा आसफ अली, दुर्गा भाभी एवं सरला बेन आदि गिनी-चुनी महिलाएँ सार्वजनिक जीवन में राष्ट्रीय आन्दोलन एवं समाज सुधार के मंचों से अपने विचार प्रकट करती थीं तब आज से अर्द्धशताब्दी पूर्व उत्तराखण्ड गढ़वाल की एकमात्र महिला विद्यावती डोभाल अपने भाषणों और अपनी सरस रचनाओं से जनता को जागृत कर रही थीं।

विद्यावती डोभाल के विषय में तत्कालीन विद्वानों के कुछ उदाहरण प्रस्तुत करना आवश्यक होगा। श्री दया शंकर भट्ट ने लिखा- "आज से 45 वर्ष पूर्व लाहौर में जब महामहोपाध्याय दयाशंकर भट्ट, पण्डित परमेश्वरानंद जी शास्त्री, अखिल गढ़वाल सभा के अध्यक्ष और मैं (दया शंकर भट्ट) उपाध्यक्ष था तब एक विशाल सार्वजनिक सभा में गढ़वाल की प्रथम साहित्यकार महिला विद्यावती डोभाल का तत्कालीन सामाजिक एवं राजनीतिक स्थिति पर ओजस्वी भाषण सुना तो मैंने गढ़वीरांगना और मातृवर्ग की सच्ची प्रतिनिधि बताकर उनका अभिनन्दन किया था।" (21-8-1975)

तब लाहौर में "हिन्दी मिलाप" के सम्पादक खुशाल चन्द्र जी ने अपने समाचार पत्र के लिए विद्यावती जी का फोटो माँगा किन्तु उन्होंने अति विनम्रतापूर्वक अस्वीकार कर दिया। वर्षों पूर्व 1939 में समाचार पत्र 'गढ़वाली' में उनका चित्र छपा था। सन् 1918-1919 में विद्यावती डोभाल जी ने कठिन परिश्रम से निबन्ध और कविताएँ लिखकर आत्माभिव्यक्ति की तथा पत्र-पत्रिकाओं में देना प्रारम्भ किया। विद्यावती डोभाल ने नाम के भय के कारण सकलानी नहीं लिखा। ये वो समय था जब महिलाओं की शिक्षा पर ध्यान नहीं दिया जाता था। अंग्रेजों के राज्य में पहला समाचार पत्र विश्वम्भर दत्त चन्दोला ने 'गढ़वाली' सन् 1905 में प्रकाशित किया। वह हिन्दी और गढ़वाली भाषा का पहला समाचार पत्र था उसमें आपकी रचनायें छपने लगी। 'हृदय-शुद्धि' नामक रचना के नीचे तत्कालीन सम्पादक महोदय स्व० श्री पं० विश्वम्भर दत्त जी चन्दोला ने ये शब्द लिखे थे-

सम्पादकीय नोट

"उक्त पंक्तियों की लेखिका एक विदुषी महिला है, पिंगल शास्त्र का पर्याप्त ज्ञान न होने पर भी श्रीमती विद्यावती जी के हृदय में कविता का बीज अंकुरित हो चुका है। इनकी रचनाओं में भावुकता, सरसता और सजीवता की झलक है। किसी-किसी पंक्ति में तो प्रसाद गुण के अतिरिक्त एक मीठी पीड़ा भी छिपी है। हम देवी जी की कृतियों को छंद

दोष-रहित करना चाहते थे, किन्तु ऐसा करने से उनके मौलिक भावों पर ठेस पहुँचती। अत: पाठकों के मनोरंजन के लिए, इन्हें हम अविकल ही छापते हैं।"

सम्पादक 'गढ़वाली'
7 मई 1927

सन् 1920 में स्वामी विचारानन्द जी के सम्पादकत्व में 'आश्वासन' नामक रचना 'अभय' नामक पत्रिका में देहरादून से प्रकाशित हुई। वह स्वाधीनता आन्दोलन का समय था। अत: विद्यावती की देशभक्तिपूर्ण कविता सर्वत्र सराही गईं। एक महिला होते हुए उनकी विचारोत्तेजक क्रांतिकारी रचना पाठकों को विस्मयकारी लगी।

इलाहाबाद से प्रकाशित 'चाँद' में 'गढ़वाल की सामाजिक दशा' लेख और प्रयाग से प्रकाशित एक अन्य समाचार पत्र में तथा पत्रिका 'गृहलक्ष्मी' में एक लेख प्रकाशित हुआ और क्रमश: विद्यावती की रचनायें प्रकाशित होती रहीं।

'भास्कर प्रेस' कचहरी रोड देहरादून से सन् 1988 में प्रकाशित 'एवरेस्ट के देवता' छपी। इस पुस्तक के सन्दर्भ में मुद्रक एवं प्रकाशक सुमेध कुमार गुप्ता ने लिखा है- "पूर्व जन्म के संस्कार समझें या माता-पिता के वंशगत प्रभाव, लेखिका अपने ही प्रयास से जीवन भर स्वाध्याय करती रही और गद्य-पद्य रचनाओं के सृजन में व्यस्त रही। उनकी राजनैतिक विषयक, विशेषकर सामाजिक कुप्रथाओं के विरुद्ध रचनायें तत्कालीन पत्र-पत्रिकाओं में छपती रहीं।"

"बीते अतीत की बात है जिस संभ्रान्त वंश में यह ब्याही गई थी उस घराने में महिलाओं की प्रतिष्ठा के लिए घोर पर्दा प्रथा थी और विद्यावती अपने लेख व कविताओं को पत्रों में प्रकाशित करने की शौकीन थी। इसलिए पति के भय से अपने नाम के आगे पिता का वंश डोभाल लिखती रही। अब साहित्य जगत में वह इसी नाम से जानी जाती हैं। विद्यावती 'गढ़वाली' की सर्वप्रथम स्वत: अध्येता व लेखिका थी।"

हिन्दी के प्रकाण्ड विद्वान श्री गया प्रसाद शुक्ल, एम०ए०, एल०एल०बी०, भूतपूर्व अध्यक्ष हिन्दी विभाग, डी०ए०वी० कॉलेज देहरादून ने 'पगली के प्रलाप' की प्रशंसा करते हुए उल्लेख किया, "माफीदारनी श्रीमती विद्यावती डोभाल की समय-समय पर लिखित तथा 'गढ़वाली' आदि विख्यात पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित रचनाओं का यह 'पगली के प्रलाप' शीर्षक संग्रह स्व० मेजर हर्षवर्धन बहुगुणा की पुनीत स्मृति को चिरस्थायी बनाने के सदुदेश्य से हिन्दी

जगत के सम्मुख प्रस्तुत किया जा रहा है। मेजर हर्षवर्धन बहुगुणा एवरेस्ट विजय के अभियान में बीच में ही शहीद हो गये। इन रचनाओं में जीवन के सत्य को संगीतमयी वाणी में अभिव्यक्ति करने का सफल प्रयास हुआ है। इनमें जीवन के विविध पक्षों पर अपनी अन्वीक्षिणी एवं अन्तर्भेदिनी दृष्टि डालती हुई यशस्विनी लेखिका ने जीवन की कई अत्यन्त महत्वपूर्ण, शाश्वत तथा सामयिक समस्याओं का उद्घाटन किया है। इन कविताओं में अन्तः सत्ता के बुद्धि पक्ष और रागात्मक दोनों का मंजुल समन्वय दृष्टव्य है।" तत्कालीन प्रसिद्ध साहित्यकार कैप्टन शूरवीर सिंह पंवार का विचार है- "गढ़वाली नारी समाज की उज्ज्वल परम्परा में श्रीमती विद्यावती सकलानी का प्राचीन भारती, गार्गी, मैत्रेयी आदि की भाँति एक विशिष्ट स्थान है।"

विद्यावती डोभाल के पश्चात् इनकी दोनों पुत्रियाँ भी इनके पश्चात् लेखन करती रहीं। वसुंधरा डोभाल ने 'वसुमनाञ्जली' तथा दूसरी पुत्री प्रभावती कुकरेती ने 'प्रभा रश्मि' भजन संग्रह प्रकाशित किया।

सन् 1992 में मुझे 'धाद ग्रन्थ आयोजन-1' के लिए एक शोध निबन्ध लिखना था जिसका विषय था- 'उत्तराखण्ड की सामाजिक हलचलों में महिला भूमिका'। इसके लिए मैंने बहुत परिश्रम और शोध किया, बहुत लोगों से मिली, किन्तु मुझे महिलाओं के विषय में विशेष जानकारी नहीं मिली, न ही महिलाओं के विषय में और न महिला लेखिकाओं के विषय में। महिला लेखन का तो प्रचलन ही नहीं था, बात उत्तराखण्ड विषयक है।

सन् 1902 में कुछ विद्वानों ने 'गढ़वाल यूनियन' की स्थापना की और उसके अन्तर्गत सन् 1905 से 'गढ़वाल' साप्ताहिक समाचार पत्र प्रकाशित करना शुरू किया गया जिसके माध्यम से परतन्त्र देश में पर्वतीय क्षेत्रों से संवाद हो सके, किन्तु तब देश गुलाम था और समाचार पत्रों में केवल राजनैतिक और सामाजिक विषय की चर्चा होती थी क्योंकि तब सामाजिक और संचेतनात्मक लेखन का ध्येय था स्वतंत्रता प्राप्ति। 'गढ़वाली' मिशन पत्रकारिता थी। संपादक विश्वम्भर दत्त चन्दोला जी ने जौनसार क्षेत्र की बहकाकर भगाई गई महिलाओं को खोजा, उन्हें वापस देहरादून लाये और उनके घर भेजा।

पहले लैंसडौन से और फिर कोटद्वार से स्वतंत्रता सेनानियों और राष्ट्र के प्रति जागरुक विद्वानों ने 'कर्मभूमि' पत्रिका का प्रकाशन आरम्भ किया जिसमें तत्कालीन शिक्षा मंत्री भक्त दर्शन जी तथा वरिष्ठ स्वतंत्रता सेनानी भैरवदत्त धूलिया जी सम्पादकत्व से जुड़े थे। उसमें अधिकांश जन मानस के लिए राष्ट्रीय संचेतना, सामाजिक संचेतना और जागरुकता की बातें

होती थी किन्तु तब मेरे संज्ञान में महिला लेखिका न के बराबर थीं। पत्र-पत्रिकाओं का एक मात्र ध्येय होता था स्वाधीनता प्राप्ति। संस्कृति और साहित्य संरक्षण के लिए भी 'गढ़वाली', 'कर्मभूमि' एवं कोटद्वार से वरिष्ठ पत्रकार स्व॰ पीताम्बर दत्त के 'सत्यपथ' समाचार पत्र ने कार्य किया।

देहरादून से सन् 1947 में आचार्य गोपेश्वर कोठियाल ने 'युगवाणी' साप्ताहिक का प्रकाशन आरम्भ किया किन्तु तब भी किसी महिला लेखिका का लेख पढ़ने को नहीं मिला। मैंने महीनों बैठकर वहाँ 'युगवाणी' की सारी फाइलें सन् 1992 तक देखीं। उसमें कभी-कभार एक लेख पढ़ने को मिलता था जिसमें लेखिका संकोचवश स्वयं को 'दीदी' नाम से लिखती थी। यही बात श्रीमती विद्यावती डोभाल के लेखों से भी स्पष्ट होती थी कि उस समय उत्तराखण्ड में महिलाओं का लेखन परिवार और समाज में कुछ लोगों की संकीर्ण मानसिकता के कारण बदनामी की बात समझी जाती थी।

अपने अल्प शोध के दौरान मैंने पाया कि पुरानी लेखिकाओं में अल्मोड़ा की सुश्री जयन्ती पाण्डे, श्रीमती गौरा पन्त 'शिवानी' प्रथम उपन्यासकार व लेखन हेतु पद्मश्री प्राप्त पहली उत्तराखण्डी महिला हैं। शिवानी के लेखन में आञ्चलिक सामाजिक एवं पारिवारिक परिवेश का अपनी भाषा में बहुत सुन्दर तथा अति रोचक वर्णन है। शिवानी जी के सृजन संसार पर तो पूरी पुस्तक उल्लेखनीय है। साहित्य, संस्कृति एवं परम्परा को सँजोए सामाजिक परिवेश में घटित घटनायें, सत्यकथा और कल्पना का रोचक तालमेल, मातृभूमि की माटी की सोंधी गंध लिए लोक भाषा कुमाऊँनी-गढ़वाली, बंगला, संस्कृत आदि रचनाओं के मुहावरे या प्रसंगवश सभी भाषाएं शिवानी जी के सृजन में समाहित हैं। मानव जीवन के करुण प्रसंग, प्रश्न और समाधान के तालमेल एवं विविध विशेषताओं से समृद्ध 'शिवानी' जी का साहित्य तो विश्व साहित्य जगत में अपना झण्डा गाड़ चुका है। शिवानी की पुत्री श्रीमती मृणाल पाण्डे सुविख्यात लेखिका हैं, उन्होंने अपने सारस्वत परिवेश का पूरा उपयोग करते हुए साहित्य को बीसवीं सदी के उत्तरार्द्ध में महत्वपूर्ण योगदान दिया।

नैनीताल की सुश्री नमिता पंत गोखले प्रथम अंग्रेजी लेखिका हैं। श्रीमती मृणाल पाण्डे राष्ट्रीय स्तर पर प्रथम महिला सम्पादक रही हैं। इन महिलाओं की पृष्ठ भूमि शैक्षिक व सहयोगी थी अत: इन्हें आगे बढ़ने का पूरा मौका मिला जिसका सदुपयोग करते हुए इन्होंने अपनी लेखनी से साहित्य को समृद्ध किया।

देश स्वतंत्र होने के बाद वर्तमान में बीसवीं सदी के उत्तरार्द्ध में महिलाओं द्वारा बहुत कुछ लिखा जाने लगा। विशेषकर उत्तराखण्ड राज्य निर्माण के पश्चात् तो महिलाओं में एक नया जोश, नया उत्साह और बेचैनी भरी अभिव्यक्ति की आकाँक्षा पैदा हुई। येन-केन प्रकारेण जैसा भी हो, सृजन हो ही रहा है। विविध विधाओं में कहानी, उपन्यास, नाटक, संस्मरण, कविता, समीक्षा, गीत, गजल एवं रिपोर्ताज आदि सभी विषयों में बहुत अच्छा लिखा जा रहा है। इक्कीसवीं सदी के प्रारम्भ से ही महिला लेखन उत्तरोत्तर विकास की ओर अग्रसर है। सुश्री सरला बहन (मेरी कैथरिन हाइलाइन, विदेशी मूल) जिन्होंने सन् 1946 में बापू के 'अनासक्ति योगाश्रम' के तहत 'लक्ष्मी आश्रम कौसानी' की स्थापना की और आजीवन उत्तराखण्ड की सेवा में समर्पित रहीं, आपने अपने अनुभवों को बहुत रोचक डायरी के रूप में लिखा जो पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित होता रहा, विशेषकर ऋषिकेश से निकलने वाली साहित्यिक मासिक पत्रिका 'लोक गंगा' में।

राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी के जीवन दर्शन से प्रभावित विदेशी मूल की मीरा बहन (मेडेलिन स्लेट) ने भी उत्तराखण्ड से सम्बन्धित प्राकृतिक जीवन शैली अपनाने के विषय में पर्याप्त लिखा। लक्ष्मी आश्रम कौसानी की तत्कालीन अध्यक्ष सुश्री राधा बहन ने 'माना : हिमालय की बेटी' एक बहुत सुन्दर पुस्तक लिखी जिसमें उन्होंने एक पर्वतीय किशोरी से महिला बनने की यात्रा तक जीवन में किये जाने वाले श्रम और संघर्ष की मनोरंजक और सरल भाषा में कथा लिखी है। पर्यावरण हेतु विश्व स्तर पर सम्मानित एवं सक्रिय राधा बहन से तो सभी सुपरिचित हैं। वे पहले इन्दौर में 'कस्तूरबा गाँधी संस्थान' की अध्यक्ष रहीं और वर्तमान में 'कस्तूरबा गाँधी शान्ति प्रतिष्ठान' दिल्ली में अध्यक्ष पद पर कार्य कर रही हैं। आपने समय-समय पर सुन्दर लेख लिखे। सामाजिक विसंगतियों और पर्यावरण संरक्षण, 'नदी बचाओ आन्दोलन' में सहभागिता करते हुए संचेतात्मक लेख लिखे। स्वयं सुश्री राधा बहन पर विद्वानों और समाज सेवियों द्वारा बहुत कुछ लिखा जा चुका है।

सन् 1984 में हिन्दुस्तान टाईम्स प्रकाशन द्वारा महिलाओं की उत्कृष्ट पत्रिका दिल्ली से प्रकाशित 'वामा' द्वारा पर्वतीय क्षितिज से लेकर मैदानी संस्कृति के साहित्यिक, सामाजिक, सांस्कृतिक एवं राजनैतिक परिप्रेक्ष्य से आवेष्टित विविध विधाओं में विषय सामग्री प्रस्तुत की गई है। उसमें पूरे हिन्दुस्तान की विदुषी महिलाओं के अतिरिक्त उत्तराखण्ड की प्रबुद्ध महिलाओं के लेख भी हुआ करते थे। सन् 1986 में 'वामा' पत्रिका बन्द हो गई थी। पूर्व में राष्ट्रीय महिला आयोग की परामर्शदात्री डॉ॰ कुसुम नौटियाल ने उत्तराखण्डी संस्कृति और साहित्य से जुड़े अनेक शोधात्मक लेख लिखे और संस्कृति निदेशालय के सहयोग से

हिमालय से गंधर्व 'बादी' संस्कृति और परम्पराओं के विषय में (2009) में एक पुस्तक का प्रकाशन किया जिसमें कुसुम रावत के भी 'बादी' विषय से जुड़े अनेक शोधात्मक लेख हैं।

सन् 1990 में नैनीताल से त्रैमासिक पत्रिका 'उत्तरा' का प्रकाशन आरम्भ हुआ जो अब तक नियमित रूप से प्रकाशित हो रही है। 'उत्तरा' में उत्तराखण्ड की ही नहीं अपितु भारतवर्ष के रचनाकारों की रचनायें प्रकाशित होती आ रही हैं। 'उत्तरा' में कहानी, कवितायें, सांस्कृतिक रचनायें एवं विशेषकर महिला मुद्दों को लेकर अद्यतन सब प्रकार के समाचार और तत्सम्बन्धी विचारोतेजक विषय वस्तु प्रकाशित होती है। इसके अतिरिक्त 'उत्तरा' ने पूर्व में किये गये महिलाओं के कार्यों का भी इतिहास सँवारने का प्रयास तो किया ही है, साथ ही पहाड़ में होने वाले हर आन्दोलन की विस्तृत व्याख्या समय-समय पर 'उत्तरा' द्वारा की गई है।

'उत्तरा' के सम्पादन में उमा भट्ट, शीला रजवार, कमला पंत, बसन्ती पाठक तथा सहयोग में गीता गैरोला, जया पाण्डे, कमल नेगी, मधु जोशी, जीवन चन्द्र पंत, मुन्नी तिवारी, कमल जोशी, नीरजा टंडन, दिवा भट्ट, अनीता जोशी, विमला असवाल, रितु जोशी व अन्य रचनाकार सक्रिय हैं। 'उत्तरा' ने पर्वतीय जीवन में मशाल का कार्य किया है, जिससे व्यक्तिगत, सामाजिक तथा राजनैतिक स्तर पर संचेतना तो आई ही है इसके अतिरिक्त 'उत्तरा' के माध्यम से लेखन का स्तर वैश्विक स्तर तक पहुँचने के लिए प्रयासशील है। उत्तरा में 'यादें' शीर्षक के अन्तर्गत राष्ट्रीय पुरस्कार प्राप्त शिक्षिका सुश्री गंगोत्री गर्ब्याल, इन्दु बहुगुणा, सौभाग्यवती के संस्मरण तथा विदुषी महिलाओं की रचनायें निरन्तर प्रकाशित होती आ रही हैं। नारी मुक्ति आन्दोलन को लेकर देश विदेश की महिलाओं की रचनायें भी 'उत्तरा' में प्रकाशित होती रहती हैं।

इस समय उत्तराखण्ड में बहुत अधिक संख्या में महिलायें अपने विविध रचनात्मक साहित्यिक योगदान से वाङ्मय को समृद्ध कर रही हैं। सबसे पहले मैं जिक्र करना चाहूँगी लेखिका श्रीमती अर्चना पैन्युली का जो डेनमार्क में प्रवासी के रूप में रहती हैं। उनके दो उपन्यास प्रकाशित हुए हैं, पहला 'परिवर्तन' और दूसरा 'वेयर डू आई बिलौंग'। इसके अलावा उनकी कहानियाँ कादम्बिनी व अनेक पत्रिकाओं में प्रकाशित होती रहती हैं। अर्चना की एक विशेष बात यह है कि प्रवासी होते हुए भी उन्होंने अपने प्रथम उपन्यास 'परिवर्तन' में उत्तराखण्ड की तीन पीढ़ियों की महिलाओं की परिवर्तित होती हुई मानसिकता की बहुत

सुन्दर शैली में मनोरंजक कथा प्रस्तुत की है। मैंने उनके साक्षात्कार से यह भी जाना कि वो विदेश में रहकर भी राष्ट्रभाषा हिन्दी के विकास के लिए सराहनीय कार्य कर रही हैं।

यहाँ पर यह उल्लेख भी अनिवार्य है कि देहरादून की वयोवृद्ध लेखिका श्रीमती ललिता चन्दोला वैष्णव ने एक महत्वपूर्ण कार्य किया वह है उनके द्वारा स्थापित 'विश्वम्भर दत्त चन्दोला शोध संस्थान'। इनके पिता पत्रकारिता के भीष्म पितामह कहे जाने वाले विश्वम्भर दत्त चन्दोला ने विद्वानों के सहयोग से सन् 1902 में प्रथम समाचार पत्र 'गढ़वाली' का प्रकाशन आरम्भ किया। ब्रिटिश शासन काल में पत्रकारिता एक चुनौती थी। टिहरी राज्य के सन् 1930 में घटित रवाँई गोली काण्ड की घटना का सत्य समाचार प्रकाशित करने के अपराध में उन्हें कारावास की सजा हुई और जुर्माना भी भरना पड़ा। श्री विश्वम्भर दत्त चन्दोला का प्रेस तहस-नहस कर उनकी सामग्री भी जब्त कर ली गई। सजा काटने के बाद पत्रकारिता के पुरोधा पण्डित विश्वम्भर दत्त चन्दोला ने प्रेस को पुनर्स्थापित किया। 'गढ़वाली' समाचार पत्र का प्रकाशन मिशन पत्रकारिता थी।

उनके निधनोपरान्त उनकी पुत्री श्रीमती ललिता चन्दोला 'वैष्णव' ने समाचार पत्र की सभी फाईलों को सहेज कर सुरक्षित रखा और 'विश्वम्भर दत्त चन्दोला शोध संस्थान' की स्थापना की जिसमें जिज्ञासु शोधार्थी समय-समय पर आते रहते हैं। इस पूरे कालखण्ड का इतिहास विश्वम्भर दत्त चन्दोला शोध संस्थान में सुरक्षित रखा हुआ है जिसका श्रेय श्रीमती ललिता चन्दोला वैष्णव को है। इसके अतिरिक्त देहरादून की वयोवृद्ध वरिष्ठतम लेखिका ललिता जी ने अनेक पुस्तकें लिखीं हैं। उनके लेखन की विषय सामग्री प्रायः पौराणिक कथाओं की नारी पात्र हैं। ललिता जी ने स्त्री की अन्तर्वेदना को समझा और 'नारी दर्शन' में सीता, उर्मिला, राधा आदि महिलाओं का उल्लेख कर उनके तात्कालिक जीवन दर्शन की विशेष व्याख्या की।

कूर्माञ्चल की श्रीमती देवकी मेहरा सामाजिक लेखिका के नाम से प्रसिद्ध हैं उनका काव्य संग्रह "प्रेमाञ्जलि" है और कुछ समय उन्होंने पंत जी की 'कौसानी' का संपादन किया। इनके उपन्यास 'सपनों की राधा' जिसमें जन्मभूमि का प्रेम और वेदना की अनुभूति परक 'इन्दिरायण' तथा 'कंगन' प्रकाशनाधीन हैं।

उत्तराखण्ड की रचनाकार सब जगह सृजन में सक्रिय हैं। दिल्लीवासी वरिष्ठ साहित्यकार डॉ॰ सुनिति रावत अनेक विधाओं में सृजन कर चुकी हैं, सम्मानित कवयित्री भी हैं। आपकी

बीस से अधिक पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं। विशेषकर आपने बाल साहित्य पर बहुत अधिक लिखा है। आप अखिल भारतीय पत्रिका 'ऋचा' की दस-बारह वर्ष से सम्पादक रही हैं और सम्प्रति 'दून कलम संगम' की सचिव हैं। दिल्ली की डॉ॰ चमेली जुगरान वर्षों से हिन्दी और गढ़वाली दोनों भाषाओं में कथाएँ लिखती आ रही हैं। वे कुशल चित्रकार भी हैं। दिल्ली से प्रकाशित 'उत्तराँचल पत्रिका' (दिल्ली) के सम्पादक मण्डल में दीपा जोशी पाण्डे भी लगभग 10-11 वर्षों से लिखती आ रही हैं जिसके परिदृश्य में उत्तराखण्ड के जन जीवन के मुद्दे हैं। दिल्ली से ही वेबसाईट पर जनवरी 2011 से 'सृजन' प्रकाशित हो रही है जिसकी सम्पादक मीना पाण्डेय और उप सम्पादक मण्डल में दीपा जोशी हैं। सन् 2003 में मसूरी से 'हिम ओज' मासिक पत्रिका का प्रकाशन आरम्भ हुआ जिसके प्रधान सम्पादक ओम प्रकाश द्विवेदी थे। सह सम्पादन में वीणापाणी जोशी, संतोष आर्या, रत्न सिंह जौनसारी तथा गोपाल भारद्वाज हैं।

राष्ट्रीय पुरस्कार प्राप्त शिक्षिका डॉ॰ पद्मा सिद्धेश ने 'अभ्यर्थना इक इन्द्रधनुष की' नामक सुन्दर ग्रन्थ की रचना की। आप पूर्व में आनन्दोत्सव आश्रम से प्रकाशित 'अमृता' में अध्यात्मिक लेख लिखती रही हैं। वर्तमान में लेखन सक्रिय है जिसमें सुविख्यात कवि रमेश कुमार मिश्र सिद्धेश पर आधारित विषय सामग्री, उनकी कवितायें और विद्वानों के विचार प्रकाशित हैं। इसके व्याज से अनेक साहित्यिक प्रसंग सँजोए हुए हैं। डॉ॰ गिरिजा सकलानी ने सामाजिक और सर्वोदयी विचारधारा से तथा पंचायत राज से जुड़ा लेखन किया। श्रीमती सरोज उनियाल, डॉ॰ गिरिबाला जुयाल ने गढ़ कवि भजन सिंह 'सिंह' पर रोचक शोध लिखा जिसमें उत्तराखण्ड की लोक भाषा और मध्य हिमालय विषयक विस्तृत जानकारी है। डॉ॰ आशा जुगरान, डॉ॰ सरिता रावत, श्रीमती सरोजनी नौटियाल कथा, निबन्ध एवं कविताएँ लिखती हैं, यत्र-तत्र प्रकाशित हुई हैं। श्रीमती शैल जखमोला, डॉ॰ ममता सिंह, डॉ॰ बसंती मठपाल का उत्तराखण्ड विषयक ग्रन्थ 'महसमर' एवं कविताएँ यत्र-तत्र प्रकाशित हुई हैं। आप समीक्षाएं बहुत सुन्दर लिखती हैं। श्रीमती सविता असवाल, श्रीमती नीता कुकरेती, श्रीमती सावित्री काला की अनेक पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं। श्रीमती उमा जोशी आजकल 'बाटुली' पत्रिका का प्रकाशन कर रही हैं। श्रीमती कमलेश्वरी मिश्रा के तीन काव्य संग्रह प्रकाशित हो चुके हैं। श्रीमती कृष्णा खुराना की रचनाएँ गद्य-पद्य दोनों विधाओं में प्रकाशित हो चुकी हैं। श्रीमती भगवती गुप्ता 'मधु', श्रीमती स्वर्ण गुप्ता 'भावना' भी लेखन के क्षेत्र में सक्रिय हैं। श्रीमती कौशल्या अग्रवाल का 'चैती' काव्य संग्रह प्रकाशित हुआ।

आप समसामयिक विषयों पर लिखने वाली जागरुक लेखिका हैं। महादेवी कन्या पाठशाला कॉलेज से जुड़ी बहुत सी लेखिकाएँ हैं, शताब्दी वर्ष 2002 में महादेवी कन्या पाठशाला कॉलेज की विशेष पत्रिका 'अनुगूँज' स्मारिका का सम्पादन 'भूतपूर्व छात्रा संघ' की सचिव सुकीर्ति आर्या ने किया जिसमें अपने जीवन में उपलब्धि प्राप्त पूर्व छात्राओं के संस्मरण एवं उच्च कोटि के निबंध संकलित हैं। वर्तमान में देहरादून, श्रीनगर गढ़वाल, पौड़ी, कोटद्वार, टिहरी, लैंसडोन, नैनीताल, हल्द्वानी, अल्मोड़ा आदि लगभग सभी जगह महिलाओं की लेखनी निरन्तर चल रही है सभी का नाम लेना सम्भव नहीं है। अल्मोड़ा विश्वविद्यालय से डॉ॰ दिवा भट्ट, डॉ॰ मधुबाला नयाल, डॉ॰ दीपा गोवाड़ी, डॉ॰ शुभा मटियानी, डॉ॰ शालिमा तबस्सुम, डॉ॰ रंजना शास्त्री एक लम्बी श्रृंखला है। महिलायें साहित्य में जो सृजन कर रही हैं उसमें गीत, गजल, कविता, कहानी, उपन्यास, निबन्ध, संस्मरण, सामाजिक व पारिवारिक मुद्दे, बाल साहित्य आदि विविधता तो है ही, इसके अतिरिक्त वर्तमान में महिलायें पंचायत राज के अनुभव और राजनीति पर भी अच्छी चर्चा कर लेखन के रूप में प्रस्तुत करने में सक्षम हैं। लोक साहित्य के लिए भी महिलाएं निरन्तर संलग्न हैं।

उत्तराखण्ड भाषा संस्थान की विदुषी पूर्व निदेशक डॉ॰ सविता मोहन स्वयं एक उच्च कोटि की लेखिका हैं। आपकी अनेक पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं। इन्होंने त्रैमासिक शोध पत्रिका 'उद्गाता' का प्रकाशन किया है। जिसमें सह सम्पादक डॉ॰ नागेन्द्र ध्यानी रहे हैं। प्रकाशन समिति में डॉ॰ विद्या सिंह (विभागाध्यक्ष हिन्दी) एम॰के॰पी॰ कॉलेज देहरादून, डॉ॰ राम विनय सिंह (संस्कृत विभाग) डी॰ए॰वी॰ कॉलेज देहरादून, डॉ॰ राम रत्न खण्डेवाल (संस्कृत विभाग) संस्कृत वि॰वि॰ उत्तराखण्ड हरिद्वार तथा शोध अधिकारी श्रीमती बबीता पांथरी एवं डॉ॰ पी॰डी॰ बड़थ्वाल, उत्तराखण्ड हिन्दी अकादमी देहरादून हैं। शोध पत्रिका में उच्च कोटि के विद्वानों के शोध निबन्ध प्रकाशित हैं।

मध्य हिमालय की सांस्कृतिक, साहित्यिक एवं सामाजिक संचेतना के लिए प्रतिबद्ध संस्था 'धाद महिला समिति' (पंजि॰) ने 13 सितम्बर सन् 1998 के दिन हिमवंत कवि श्री चन्द्रकुवँर बर्त्वाल की पुण्य तिथि की पूर्व संध्या पर एक साहित्यिक कार्यक्रम का आयोजन किया था, विषय था 'उत्तराखण्ड में महिला सम्पादक' इस गोष्ठी में जनपद के गणमान्य साहित्यकार उपस्थित थे। मुख्यातिथि के रूप में वरिष्ठ कथाकार डॉ॰ कुसुम चतुर्वेदी, विशिष्ट अतिथि डॉ॰ सुशीला डोभाल पूर्व कुलपति एवं 'पंचवटी संदेश' की मुख्य सम्पादक बीबी मोहिन्दर कौर उपस्थित थीं। सम्पादक के नाम से सुमित्रा धूलिया जिन्होंने इलाहाबाद से

प्रकाशित पत्रिका 'वसुधारा' में सहसम्पादन किया, बीबी मोहिन्दर कौर जिन्होंने कई वर्षों तक 'पंचवटी संदेश' का सम्पादन किया तथा क्रमशः अन्य सम्पादक भी रहे। वर्तमान में डॉ० दलजीत कौर भी सम्पादन कार्य से जुड़ी हैं।

श्रीमती भारती पाण्डे कूर्माञ्चल परिषद की पत्रिका 'घुघुति समौण' की सम्पादिका रही हैं। इनका उपन्यास 'अतिक्रान्त' तथा खण्ड काव्य 'चिन्तन संवाद' है जो रामचरित मानस की पृष्ठभूमि में कई प्रश्न उठाता है। 'कुंती विमर्श' भारती पाण्डे की विशेष चर्चित पुस्तक है। 'बारामासा' पत्रिका जिसका सम्पादन श्रीमती विमला रावत कर रही हैं उत्तराखण्ड की लोक संस्कृति और साहित्य को लेकर रुचिकर कलेवर के साथ प्रकाशित हो रही थी।

श्रीमती सुमित्रा धूलिया अपने विद्यार्थी जीवन से ही एक प्रबुद्ध एवं कुशल लेखिका रहीं, इन्होंने अनेक ज्वलंत विषयों पर वाद-विवाद प्रतियोगिताओं में विजयी होकर कॉलेज को गौरवान्वित किया। इनकी लेखनी एक सधी हुई वरिष्ठ लेखिका के रूप में सक्रिय रहती थी। सुमित्रा धूलिया ने एक महत्वपूर्ण कार्य यह भी किया कि कोटद्वार से प्रकाशित होने वाले समाचार पत्र 'कर्मभूमि' के सम्पादक वरिष्ठ पत्रकार एवं स्वतंत्रता सेनानी श्री भैरव दत्त धूलिया के 'स्मृति ग्रन्थ' का सम्पादन किया जिसमें धूलिया जी के कार्यकाल की घटनायें तथा उत्तराखण्ड ही नहीं अपितु पूरे देश के विद्वानों के लेख आमंत्रित कर प्रकाशित किये गये थे।

देहरादून की डॉ० कुसुम चतुर्वेदी की 250 से अधिक कहानियाँ पत्र-पत्रिकाओं में तथा पुस्तक के रूप में प्रकाशित होती रही हैं जिसमें पारिवारिक और सामाजिक उलझनों, समस्याओं एवं जटिलताओं पर आपने लेखनी चलाई। डॉ० कुसुम चतुर्वेदी के कहानियों के पात्र प्रायः निम्न मध्यम वर्ग के हैं जिसमें उन्होंने घटनाओं के माध्यम से नग्न यथार्थवादी लोक अभिव्यक्ति दी तथा मानव मनोविज्ञान की पूरी समझ के साथ आधुनिकता को भी स्पर्श किया है। बीबी मोहिन्दर कौर ने 'डॉ० बलबीर सिंह साहित्य केन्द्र' देहरादून से वर्षों तक 'पंचवटी संदेश' का प्रकाशन किया जिसमें अन्य सहयोगी भी रहे। 'पंचवटी संदेश' एक ऐसी त्रैमासिक पत्रिका है जिसमें डॉ० बलबीर का सम्पूर्ण साहित्य, प्रायः अध्यात्म से जुड़ी नैतिक एवं धार्मिक रचनाओं के अतिरिक्त मानवाधिकार से जुड़े प्रसंग भी हैं।

कथाकार कुसुम भट्ट की कहानियाँ और कवितायें जागरण और आउटलुक इत्यादि पत्रिकाओं में प्रकाशित होती रहती हैं। कुसुम भट्ट की कहानियों और कविताओं में आक्रोश

और नारी मन की पीड़ा का बिम्ब अधिक दृष्टिगोचर होता है। पूर्व में एम०के०पी० की प्रधानाचार्या रहीं डॉ० शशि प्रभा शास्त्री भी प्रतिष्ठित लेखिकाओं में से हैं। डॉ० अल्पना 'मिश्र' ज्ञानपीठ प्रकाशन से सम्मानित गद्य-पद्य निष्पन्न लेखिका तथा कवयित्री हैं। दिल्ली निवासी श्रीमती हेमा उनियाल नवोदित लेखिका हैं जो उत्तराखण्ड के मन्दिरों पर शोधपूर्ण लेखमय चित्रों के दो खण्डों में पुस्तक प्रकाशित कर चुकी हैं। गद्य-पद्य रचनाकार श्रीमती बीना बेंजवाल ने हाल ही में श्री अरविन्द बेंजवाल के साथ शब्दकोष निर्माण किया है। श्रीमती रजनी कुकरेती 'हलंत' मासिक पत्रिका की सहसम्पादक होने के अतिरिक्त गढ़वाली भाषा का व्याकरण तथा अखिल गढ़वाल सभा की स्मारिका में सम्पादन कर चुकी हैं। आप हिन्दी और गढ़वाली की जागरुक लेखिका हैं। डॉ० सपना डोभाल गद्य-पद्य रचनाकार हैं। श्रीमती साधना शर्मा पहले दून-दर्पण में और अब स्वतंत्र लेखन कर रही हैं। श्रीमती मंजरी सिन्हा कथाकार हैं। वर्तमान में श्रीमती विनोद उनियाल मासिक पत्रिका 'गगरी' का सम्पादन कर रही हैं।

कुछ अन्य लेखिकाओं के नाम इस प्रकार हैं-

(1) श्रीमती लक्ष्मी देवी टम्टा (2) अजरा खान (3) दमयन्ती कपूर (4) दीक्षा बिष्ट (5) पार्वती उप्रेती (6) नयन तारा सहगल (7) कमला चन्दोला (8) नईमखान उप्रेती (9) अनंत कुमारी (10) अर्मता देवी (11) डॉ० आशा रावत (12) आशा शर्मा (13) नीलम प्रभा वर्मा (14) सुश्री मनोरमा भटनागर (15) डॉ० मृदुला राणा (16) श्रीमती मनोरमा ढौंढियाल (17) सरोज नेगी (18) जयंती सिजवाली (19) शकुन्तला अदलखा (20) नुपुर (21) कमला विद्यार्थी (22) डॉ० चन्द्रकला रावत (23) डॉ० प्रभा पन्त (24) डॉ० पुष्पा खण्डूड़ी (25) डॉ० कुसुम डोभाल (26) डॉ० लक्ष्मी भट्ट (27) डॉ० सविता भट्ट (28) सुश्री किरन सूद (29) श्रीमती उमा मैठानी (30) सुश्री रश्मि बड़थ्वाल (31) श्रीमती कमला पंत।

मुम्बई से उत्तराखण्ड आंदोलन के दौरान 'डांडी-कांठी' मासिक पत्रिका का कुछ वर्षों तक प्रकाशन हुआ। कोटद्वार से शैलवाणी पत्रिकाओं से भी अनेक साहित्यकार जुड़ी हुई हैं।

उत्तराखण्ड महिला समाख्या की निदेशक श्रीमती गीता गैरोला गद्य-पद्य की परिपक्व तथा प्रबुद्ध लेखिका हैं, जिनकी रचनाओं में नारी की वेदना और उन्नयन की चाह तथा उत्तरोत्तर प्रगति पंथ की कामना अभिव्यक्त है।

संस्कृत विश्वविद्यालय की पूर्व कुलपति डॉ॰ सुधा पाण्डे ऑथर्स गिल्ड देहरादून चैप्टर की अध्यक्ष भी रही हैं। आपके शुद्ध संस्कृतनिष्ठ हिन्दी के लेख पत्र -पत्रिकाओं में प्रकाशित होते रहे हैं एवं शोध प्रबन्ध पर आपको डी॰लिट॰ की उपाधि प्राप्त है। आपके लेख प्राय: पौराणिक संदर्भ लिये होते हैं। सुश्री मनोरमा भटनागर 'आस्था के स्वरूप' की विदुषी लेखिका हैं एवं किरण सूद भी प्रकाशित होती रहती हैं।

देहरादून की डॉ॰ वंदना शिवा ने 'इकोफैमिनिज्म' जैसे सिद्धान्त का सृजन कर इस पुरुष मानसिकता को नकारा कि महिलाएं पर्यावरण जैसे गूढ़ और जटिल विषय को नहीं जानतीं। उनका मत है कि 'पर्यावरण संरक्षण' और 'नारी स्वतंत्रता' एक दूसरे के अविभाज्य अंग हैं। "चिपको आंदोलन" की विश्व विख्यात गौरा देवी व अन्य जागरुक महिलाओं की सक्रिय भागीदारी को देखते हुए डॉ॰ वंदना शिवा ने 'स्टेंइग अलाइव: विमेन एण्ड इकालौजी' पुस्तक लिखी। इसी पुस्तक के आधार पर एक अन्तराल के बाद "इकोफेमिनिज्म" सिद्धान्त प्रतिपादित हुआ, बीसवीं सदी के अन्तिम दशक में जिस पर उन्हें "राईट लाइव्ली हुड" पुरस्कार से सम्मानित किया गया। नीदरलैंड के राज घराने द्वारा स्थापित यह पुरस्कार नोबेल पुरस्कार के समकक्ष मान्य है।

अंग्रेजी की लेखिकाओं में श्रीमति सरोज उनियाल समसामयिक मुद्दों पर लिखकर अनेक पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित होती रहती हैं। अंजली नौरियाल टाईम्स ऑफ इंडिया की दून की वरिष्ठ संयोजिका हैं, वीना शर्मा भी अंग्रेजी की पत्रकार हैं। पत्रकारिता से जुड़ी नई पीढ़ी की देवयानी उनियाल जो दिल्ली इन्डियन एक्सप्रेस में एसोसियेट हैं, मालविका उनियाल वन्य जीव और पर्यावरण के विषय में राष्ट्रीय और अंतराष्ट्रीय स्तर पर नवीनतम लेखन करती आ रही हैं, डॉ॰ वंदना जोशी भी अंतराष्ट्रीय स्तर की लेखिका हैं जो मार्डन हिस्ट्री पर शोध स्तर पर लेखन करती हैं।

उत्तराखण्ड नवोदित राज्य निर्माण (9-11-2000) के बाद तो निश्चय ही एक नई चेतना, नई उमंग और साथ ही महत्वाकांक्षा पनपी। महिलायें पंचायत चुनाव में विजयी हुईं तथा राजनीति में आईं। अत: अपनी जन्मभूमि के लिए खट्टे- मीठे-तीखे अनुभवों पर आधारित, मद्य रहित, व्यसन विहीन, भ्रष्टाचार रहित और प्रति व्यक्ति रोजगारपरक राज्य की कल्पना उत्तराखण्ड की नारी के मानस पटल पर बदस्तूर कायम है। एक उज्ज्वल भविष्य की कामना के साथ संप्रति उत्तराखण्ड की साहित्यकार नारी पावन सृजन में दृढ़ता से संलग्न है।

जिनसे कुछ सम्पर्क रहा, उनके विषय में दो-चार पंक्तियां लिखीं, अन्य लेखिकाओं के केवल नाम भर लिख पाई और अभी भी बड़ी संख्या उन स्वनाम धन्य लेखिकाओं तथा कवयित्रियों की है जिनके मैं नाम भी नहीं लिख पाई जो उत्तराखण्ड के सभी जिलों में कुछ न कुछ रच रही हैं। संस्कृत, हिन्दी, अंग्रेजी, गढ़वाली, कुमांऊनी जौनसारी तथा अन्य लोक भाषाओं में भी लिख रही हैं। उत्तराखण्ड में महिला रचनाधर्मी निरन्तर सक्रिय हैं किन्तु बहुत सी अप्रकाशित हैं।

❑❑

रचनाधर्मिता और समाज

❑ डॉ० विद्या सिंह

परिवेशगत दबाव के बीच निरन्तर आकार लेते मनुष्य और व्यक्ति की आकांक्षाओं के दबाव से नया व्यक्तित्व ग्रहण करता परिवेश दोनों मिल-जुल कर ही समय के सत्य का संश्लिष्ट इतिहास बुनते हैं। व्यक्ति इतिहास में नहीं, समय के स्पंदन को जीता है। कलाकार उस स्पंदन की जीवन्तता और प्रतिघात को शिरा-शिरा में महसूस कर उसकी निर्मिति के कारकों की बारीक खोज में तल्लीन हो जाता है। जीवनेच्छा और साहित्यरचना के बीच निकट सादृश्यता है। साहित्य शब्दों के बहुआयामी प्रयोगों द्वारा जिंदगी के दबावों से मुक्त करके एक समानान्तर इच्छालोक रचता है। मुक्ति और रचना का यह दोहरा अहसास यथार्थ से पलायन नहीं, अदम्य जीवन शक्ति का परिचायक है, जो साहित्य और कलाओं की रचनाशीलता में प्रकट होता है। यही सृजन है, यही रचना है और रचनाकर्म ही रचनाधर्मिता है। रचनाधर्मिता का एकमात्र प्रतिफलन साहित्य है। साहित्यकार समाज में हर पल घटित हो रहे परिवर्तन की आहट की पदचाप सबसे पहले सुन लेता है और अपनी रचना द्वारा सामान्य जन के लिए उसे सुलभ कर देता है।

समय के अनुसार साहित्य ने अनेक रूप बदले हैं। संसार की अनेक महान रचनाऐं बगैर लिपि के मौखिक परम्परा में जन्मीं ओर मौखिक परम्परा में जीवित रहीं। वेद, महाभारत, कथासरित्सागर, बेतालपच्चीसी, सिंहासन बत्तीसी और किस्सा तोता मैना आदि आख्यान की वाचिक परम्परा के महत्वपूर्ण उदाहरण हैं। लिपिबद्ध होने से पूर्व सदियों की यात्रा इन्होंने वाचिक स्तर पर ही तय की। कालान्तर में ये समस्त आख्यान पुस्तकाकार रूप में लिपिबद्ध किये गये। मानव सभ्यता के विकास के पूंजीभूत अनुभव इन पुस्तकों में सुरक्षित हैं। वर्सफोल्ड का कथन है, "Literature is the brain of humanity" अर्थात साहित्य मानव समाज का मस्तिष्क है। उसमें समस्त मानव जाति के अनुभवों और विचारों का भण्डार सुरक्षित रहता है।

समय और समाज से कटी हुई रचना निष्प्राण होती है। साहित्य के कलावादी पक्षधर साहित्य की सामाजिक उपयोगिता को भले ही बेमानी ठहराते हों, तथापि साहित्य की सामाजिक भूमिका की अनदेखी नहीं की जा सकती। वंचितों और पीड़ितों की पक्षधरता में

रचे गये साहित्य को जन मानस युगों-युगों तक महत्व देता है। कबीर, तुलसी, प्रेमचंद यदि आज भी प्रासंगिक हैं तो इसके पीछे जनमानस का उनसे तादात्म्य है। कबीर ने यदि अपने समय के पाखण्डों का चित्रण किया तो तुलसी ने कलिकाल वर्णन के प्रसंग में अपने पूरे समाज को ज्यों का त्यों उतार दिया। 'मारग सोइ जा कहुं जोइ भावा/पंडित सोइ जो गाल बजावा' पंक्तियाँ उस युग की स्वेच्छाचारिता का बयान तो करती ही हैं, हमारे अपने समय के यथार्थ को भी वाणी देती प्रतीत होती हैं। रामराज्य के रूप में तुलसी ने एक ऐसा आदर्श राज्य प्रतिष्ठित किया, जिसे साकार करने के लिए महात्मा गाँधी ने अपना सम्पूर्ण जीवन ही व्यतीत कर दिया। तुलसी ने समाज से सिर्फ प्रभाव ग्रहण नहीं किया, सामाजिक धारा को मोड़ने का सफल कार्य भी सम्पन्न किया। वास्तव में राम को हमारे जीवन में उन्होंने व्याप्त कर दिया। आचार्य शुक्ल ने ठीक ही कहा है, "हमने चौड़ी मोहरी का पजामा पहना, आदाब अर्ज किया पर राम-राम न छोड़ा। अब कोट पतलून पहन कर बाहर 'डेम नॉनसेंस' कहते हैं पर घर में आते ही फिर वही राम-राम। यह भी अब बीत चुका। अब फिर हम गाँधी टोपी, अचकन और चूड़ीदार पजामा पहन कर बाहर 'जय हिन्द' कहते हैं पर घर में हर हाल में राम का नाम ही याद करते हैं।" युग की रुचि बदल देना साहित्यकार के ही बस की बात है। भारतेन्दु, प्रसाद, दिनकर, प्रेमचन्द आदि सभी साहित्यकारों ने अपनी प्रतिभा से समाज को प्रभावित किया। 'कामायनी' में प्रसाद जी ने विज्ञान द्वारा चकाचौंध हुए एवं उसके सम्मुख घुटने टेक देने वाले मानव को अति वैज्ञानिकता तथा अति बौद्धिकता का कुपरिणाम दिखाकर उससे बचने का संदेश दिया और अधिक चाह वाली भावना से ग्रस्त मनु जीवन पर्यन्त क्लेश पाते रहे, अत: मनु के चित्रण द्वारा प्रसाद जी मानव समूह को संतुलित उपभोग की शिक्षा ही दे रहे थे। असंतुलित विकास की भयावहता आज अपने चरम रूप पर है। साहित्य की भविष्योन्मुखी दृष्टि का यह ज्वलन्त उदाहरण है।

इन दिनों प्राय: कुछ लोगों द्वारा इस बात की चिंता प्रकट की जाती है कि इन्टरनेट का विस्तार किताबों के वर्तमान स्वरूप को समाप्त कर देगा। यहाँ आशय छपी हुई पुस्तकों से है। सिनेमा के अभ्युदय में भी साहित्य की समाप्ति का दु:स्वप्न देखा गया था। टेलीविजन को सिनेमा और साहित्य दोनों का संहारक माना गया। किन्तु ऐसा कुछ भी नहीं हुआ। साहित्य या अन्य कुछ हो, जब उसके सम्मुख मिट जाने की चुनौती आती है तो वह अपनी अस्तित्व रक्षा के लिए अपने को परिवर्तित और तत्कालीन परिस्थितियों में भी अपनी उपस्थिति को निर्धारित करता है, कई बार नये सिरे से स्थापित करता है। हमारे कथा साहित्य

में, कविता में, जो विभिन्न बदलाव हुए हैं उनके पीछे सामाजिक, वैचारिक दबावों के साथ इस कारक का भी निश्चय ही योगदान रहा है। भोजपत्र से ई-बुक और ई-पत्रिका की यात्रा लिपि के अस्तित्व की यात्रा है।

प्रत्येक समय में ऊपर की सारी आयोजित-प्रायोजित क्रिया रूढ़ियों के नीचे जनमानस की ऐसी अन्तर्धारा प्रवाहित होती है जो समय-समय पर पूरी शक्ति के साथ दिख जाती है। दरबारी या राज्याश्रयी लेखन को यदि अपवाद मान लें तो हर युग में लेखकीय प्रतिबद्धता वंचितों, पीड़ितों के साथ दिखाई देती है। सत्ता चाहे नरेशों-महानरेशों की रही हों या लोकतांत्रिक शासन में तानाशाही, स्वेच्छाचारी सरकारों की, लेखकों ने उनके कार्य व्यवहार को आम लोगों की भलाई के कांटों पर तौला है और तौल में कमी होने पर वे उनकी निन्दा करने से नहीं चूके हैं। प्रेमचन्द का आदर्शोन्मुख यथार्थवाद से यथार्थोन्मुख आदर्शवाद का सफर दरअसल भारतीय गरीब किसान के मजदूर बनने की प्रक्रिया को साहित्य में दर्शाता है। तत्कालीन सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक और राजनैतिक समस्याएं, दहेज और अनमेल विवाह की समस्या, छुआछूत, आभूषण प्रियता और सामाजिक आडम्बर की समस्या, लगान की समस्या, सत्ता की अमानुषिकता, मिटती हुई कृषक सभ्यता की समस्याएं, टूटती हुई आस्थाओं की समस्याएं, विलास और वैभव के हाथों बिकते हुए भारतीय देशद्रोहियों की समस्याएं, सभी प्रेमचन्द के कथा साहित्य में इतने विस्तृत और जीवन्त रूप में चित्रित हुई है कि वह युग पाठक की आंखों के सामने प्रस्तुत हो जाता है। उस समय के बहुत से प्रश्नों का उत्तर देने में उनकी रचनाएं समर्थ हैं। जिन सवालों के जवाब राजनीति नहीं दे पाती, उनके जवाब साहित्य में खोजे जा सकते हैं।

साहित्य प्रमुखत: हृदय और गणित मस्तिष्क की वस्तु है। जहाँ ज्ञान और उपदेश असफल होता है वहाँ साहित्य बाजी ले जाता है, किन्तु उसमें यह ताकत तब आती है यदि उसके शब्द पाठकों के जटिल प्रश्नों से जूझने में उनकी मदद करते हों। पाठक अपना भोगा हुआ सच सुन्दर रूप में पाकर साहित्य को अपने निकट अनुभव करता है। प्रत्येक युग का साहित्य अपने समय और परिवेश की पड़ताल का लेखा-जोखा होता है। परिवर्तन की अलक्षित प्रक्रिया मन के भीतर तरल अहसास के स्तर पर और बाहर स्थलूताओं से निर्मित गोचर परिवेश में निरन्तर चलती रहती है। मन और बाहरी परिवेश दोनों की विकास यात्रा कदम साथ-साथ न भी रहें, एक दूसरे के प्रभाव से अछूते कभी नहीं रहते।

आज चन्द पूंजीपतियों ने लोकतंत्र को हाईजैक कर लिया है। उनके लिये सत्ता में बने रहना सबसे बड़ी प्राथमिकता है। इसीलिये वे हर उस व्यक्ति को लाभ पहुँचाने की कोशिश करते हैं जो उन्हें सत्ता में बने रहने में सहायक हो सकता है। पुरस्कारों की राजनीति इसी प्रवृत्ति का द्योतक है। साहित्यकार की प्रतिबद्धता का सवाल उठाने का यह सही समय है। आज साहित्य के पाठक कौन हैं? लेखक, प्रूफ रीडर और एक प्रोफेशनल आलोचक? ऐसा क्यों है? इसके जवाब में जो तर्क दिये जाते हैं वे कोई मायने नहीं रखते जैसे कि किताबों का मूल्य ज्यादा है, टी.वी. ने समय नहीं बचने दिया इत्यादि। आज साहित्य में जन के प्रति उस प्रतिबद्धता का सर्वथा अभाव दिखाई देता है, जो कबीर, भारतेन्दु, निराला, मुक्तिबोध, नागार्जुन की परम्परा में था। निराला की 'वह तोड़ती पत्थर' श्रम के शोषण की कविता नहीं है। वह श्रम के गौरव और श्रमिक के सौन्दर्य की कविता है इसलिए अमर कविता है। श्रम की पहचान, उसकी प्रतिष्ठा, उसके गौरव का सम्मान और उसके प्रति मानवीय दायित्व की भावना ही पूंजीवादी व्यवस्था का विकल्प बन सकती है। महान साहित्यिक कृतियाँ यथा स्थिति को चुनौती देती हैं।

चाहे अनचाहे विकास का औद्योगिक मॉडल राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय स्तरों पर स्वीकृत हो चुका है। बाजारवाद और उपभोक्तावाद आज का कटु यथार्थ है, जो हमारे रहन-सहन, रीति-रिवाजों, आपसी सम्बन्धों और सांस्कृतिक-सामाजिक चेतना को कई स्तरों पर प्रभावित कर रहा है। एक बिल्कुल स्थूल और व्यावसायिक विश्वदृष्टि हमारी जीवनदृष्टि को निर्धारित कर रही है। क्या सच है, क्या महज विज्ञापन- यह दुविधा केवल चीजों तक ही सीमित नहीं है, साहित्य, कलाओं और विचारों को ले कर भी है। आज का रचनाकार भी उपभोक्तावादी संस्कृति का शिकार होता जा रहा है। आज ज्यादा दबाव, बेस्ट सेलर के उत्पादन पर है, न कि बेस्ट की सोच पर। मीडिया में भी लाखों में बिकने वाली किताबों का जिस जोर-शोर से प्रचार होता है वैसा गम्भीर और विचारशील साहित्य का नहीं। लेखक के रचनाधर्मिता के सामाजिक सरोकारों का उसके काव्यशास्त्रीय घटकों से कहीं अधिक महत्व होता है- इसे रेखांकित किये जाने की आवश्यकता है।

आज का साहित्यकार आत्मनिर्वासित जीवन जीता है। 'जन' और 'श्रम' से विलग, मानो उसका इनसे कोई लेना देना ही न हो। परायापन और आत्मनिर्वासन व्यक्ति को संवेदनशून्य और निष्क्रिय बना देता है। बाजार की शर्तों पर दुनिया को चलाने वाली ताकतें इस तरह के आत्मनिर्वासित बुद्धिजीवियों को अपने हित में इस्तेमाल करने में कभी नहीं

चूकर्ती और फिर मुनाफा, मूल्य, प्रतियोगिता, पुरस्कार, सम्मान, बाजार की मांग और आपूर्ति के घटक मनुष्य को अमानवीयकृत करते जाते हैं। बिना सामाजिक मानवीय संवेदना के कवि-कर्म सार्थक नहीं हो सकता।

भाव का अभाव से नाता बहुत गहरा है, इसलिए विपन्न लोग भीतर से संपन्न पाए जाते हैं। उनका अंतर्जगत अक्सर समृद्ध होता है। एक समझदारी लाख तकलीफों में उन्हें बांधे रखती है। संघशक्ति का दावा करने वाले सारे प्रगतिशील दर्शन और उन दर्शनों के आलोक में लिखे जाने वाले साहित्य का पहला दायित्व है कि वे वंचितों की भीतरी ऊर्जा, उनके अन्तरंग सम्बन्धों की ऊर्जा, उनके विचार की ऊर्जा रेखांकित करें। दुखी से दुखी मनुष्य के जीवन में खुशी के कुछ पल अवश्य आते हैं, इन क्षणों की शिनाख्त और उसका कलात्मक उपयोग करें। समाज में यदि नेतृत्वकारी भूमिका निभानी है तो रचनाधर्मिता का यह अनिवार्य कर्तव्य बन जाता है कि वह बहुसंख्यक लोगों के न्याय पाने के लिए किये जाने वाले संघर्ष के पक्ष में हाथ उठाती दिखाई दे। विचारधारा कोई भी हो, या न हो, लेखकीय संवेदना इस स्वत: निर्धारित भूमिका से कभी अलग नहीं होती। मनुष्य जैसे-जैसे सभ्य हुआ है अपने मूल भाव के ऊपर कृत्रिमता का आवरण डालने में उतना ही सफल हुआ है। परतों के भीतरी दरारों में छिपे बैठे वजनदार अमूर्त सत्य को सतह पर लाना रचनाधर्मिता की चुनौती है। आज के समय में रचनाकार के सामने दोहरी चुनौती है- एक तो समय को ठीक-ठाक समझने की और दूसरे उसे स्वस्थ व स्थायी जीवनमूल्यों से जोड़ सकने की। लेखक का कर्त्तव्य है कि वह नये जमाने की जरूरतों को समझे और उसके अनुसार साहित्य रचे। वह अंधेरे का चित्रण करे लेकिन उजाले की उम्मीद से वंचित न करे। सेरग्येई येस्मेनिन का कहना है कि कवि होना ऐसा है जैसे-

जीवन के प्रति निष्ठा रखना हर मुश्किल में।
मानो खुद उधेड़ कर अपनी कोमल चमड़ी,
देना लहू उड़ेल अन्य लोगों के दिल में॥

❑❑

उत्तराखण्ड के साहित्यिक परिदृश्य में महिला साहित्यकार

❑ सुमित्रा धूलिया

प्रस्तुत विषय को मैं तीन खंडों में बाँटकर देखती हूँ। 'उत्तराखण्ड साहित्यिक परिदृश्य' और 'महिला साहित्यकार'। उत्तराखण्ड से तात्पर्य निश्चय ही "उत्तराखण्ड" राज्य बनने से है, जो पहले "उत्तराँचल" और बाद में "उत्तराखण्ड" बना। इस उत्तराखण्ड का जीवनकाल अभी ग्यारह वर्ष ही है। इस काल को दीर्घकाल तो निश्चय ही नहीं कह सकते, किन्तु अभिव्यक्ति और प्रेषण की दृष्टि से यह कालखण्ड निश्चय ही महत्वपूर्ण है।

उत्तराखण्ड के साहित्यिक परिदृश्य पर विहंगम दृष्टि डालें तो मूलत: यहाँ आध्यात्मिक साहित्य की प्रधानता रही है। देवभूमि में अधिकांशत: देवी-देवताओं से सम्बन्धित साहित्य ही उपलब्ध है। पर्यटन सम्बन्धी साहित्य भी प्रचुर मात्रा में विद्यमान है। एटकिन्सन की पुस्तक "ए शेफ्ट ऑफ सन लाईट" और "हिमालयन गजेटियर" सूचनायें देते हैं किन्तु साहित्य सम्बन्धी नहीं। यहाँ की देव संस्कृति का संरक्षण मन्दिरों में और मन्दिरों से लगी हुई संस्कृत पाठशालाओं में हुआ है। उस युग में लेखन प्राय: स्वान्त: सुखाय अधिक लिखा गया है। श्री भवानी दत्त थपलियाल रचित "प्रहलाद" नाटक मूल गढ़वाली में लिखा गया है। काव्य जगत में गुमानी और गिर्दा के साथ चन्द्रकुँवर बर्त्वाल का नाम उल्लेखनीय है। प्रकृति के अनुपम चित्रकार कवि सुमित्रानन्दन पन्त को कौन नहीं जानता। पं० पीताम्बर दत्त बड़थ्वाल ने भी साहित्य की श्रीवृद्धि की है। कहा जा सकता है कि यूं तो उत्तराखण्ड में साहित्य के क्षेत्र में पुरुष वर्चस्व प्रधान रहा, किन्तु महिला साहित्यकारों ने भी अपनी सशक्त उपस्थिति दर्ज कराई है। ऐसी महिला साहित्यकारों में सन् 1901 में जन्मी श्रीमती विद्यावती डोभाल सकलानी का नाम सर्वोपरि है। 'समाज पीड़िता' के उपनाम से इन्होंने लेखन किया। इनकी रचनायें हैं- 'अमृत की बूँदें', 'पगली का प्रलाप' (उपन्यास)। तीन गढ़वाली गीतिका (कविता) तथा जीवनी में पगला देवी जुयाल की जीवनी और 'माँ की ममता।'

1904 में जन्मी **श्रीमती चन्द्रावती लखनपाल** का नाम भी उल्लेखनीय है। इन्होंने 'मनोविज्ञान' विषय पर पुस्तक लिखी है।

अल्मोड़ा में 1911 में जन्मी **श्रीमती लक्ष्मी देवी टम्टा** शिल्पकार समाज का प्रतिनिधित्व करती हैं। पत्रकारिता के क्षेत्र में उल्लेखनीय कार्य करते हुए इन्होंने 'समता' साप्ताहिक पत्र का सम्पादन किया।

इसी कड़ी में एक और नाम है **डॉ० दमयन्ती कपूर** का जो कन्या गुरुकुल देहरादून की प्रधानाचार्य रहीं। इनकी वार्तायें और लेख सामयिक पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हुए। 1923 में जन्मी **गौरा पन्त 'शिवानी'**- को सभी साहित्य प्रेमी जानते हैं। हिन्दी साहित्य जगत की सशक्त कथाकार एवं उपन्यासकार शिवानी का मूल निवास अल्मोड़ा था। पैंतीस वर्षों के लेखकीय जीवन में इन्होंने तेरह उपन्यास, तेरह कहानी संग्रह, आठ यात्रा वृतान्त और आठ संस्मरण की रचना कर हिन्दी साहित्य की श्रीवृद्धि की है। इन्होंने शान्ति निकेतन में गुरु रवीन्द्रनाथ जी की छत्रछाया में नौ वर्षों तक अध्ययन किया। 1981 में "पद्मश्री" पुरस्कार प्राप्त किया।

योग्य माता शिवानी की योग्य पुत्री **श्रीमती मृणाल पाण्डेय** का जन्म 1946 में हुआ। इन्होंने प्रसिद्ध महिला पत्रिका 'वामा' का सम्पादन किया। 'दरम्यान, शब्द भेदी, एक नीच ट्रेजडी' इनकी कथा संग्रह है। 'विरूद्ध' और 'पटरंगपुर पुराण' दो उपन्यास हैं। आजादी के बाद परिवर्तित भारतीय परिवेश को इन्होंने अपनी कहानियों, उपन्यास और नाटकों का विषय बनाया। आप अंग्रेजी भाषा में भी लेखन कार्य करती हैं।

1965 में जन्मी **दीक्षा भट्ट** ने प्रधान रूप से विज्ञान लेखन का कार्य किया है। इन्होंने राष्ट्रीय स्तर की विज्ञान-पत्रिका का 12-13 वर्षों तक सम्पादन किया। इनकी दो पुस्तकें अनूदित और दो प्रकाशित है। इन्हें 'विज्ञान श्री' से सम्मानित किया गया। विज्ञान को लोकप्रिय बनाने में इनका योगदान प्रशसंनीय है।

1956 में जन्मी **डॉ० पुष्पा भट्ट**- 'आराधक श्री' पुरस्कार से पुरस्कृत हुई हैं। डॉ० पुष्पा भट्ट हिन्दी प्रशिक्षण संस्थान दिल्ली से हैं। इनका प्रकाशित साहित्य 'कुमाऊँनी लोक कथाओं में जनजीवन' तथा 'सरकारी कामकाज में हिन्दी', 'महान राजनैतिक महिलायें', 'हम विकलांग क्यों', 'पर्वतीय लोक कथायें', 'हिन्दी कार्यशाला प्रशिक्षण' आदि हैं।

1965 में जन्मी **अजरा खान** भी एक सशक्त लेखिका हैं। 'कसम' और 'तड़प' इनके दो गजल संग्रह हैं। 'मानवीयता', 'स्वयं की पहचान मीराबाई' ओर 'आईना' आदि निबन्ध हैं।

पार्वती उप्रेती की हिन्दी तथा कुमाऊँनी रचनाओं का प्रकाशन सनातन धर्म, साप्ताहिक तथा अचल साप्ताहिक अल्मोड़ा से हुआ। "धरती की बेटी" इनका खण्ड काव्य है। कुमाऊँनी खड़ीबोली 'घात' इनकी कृतियाँ हैं।

नमिता गोखले अधिकांशत: अंग्रेजी में लिखती हैं। Mountain Echos तथा Renaissance of Kumauni Women इनकी कृतियाँ हैं। ये पं॰ गोविन्द बल्लभ पन्त जी के परिवार से हैं। इनका विवाह गोखले परिवार में हुआ था।

डॉ. शशी प्रभा शास्त्री लोकप्रिय कहानीकार और उपन्यासकार हैं। डॉ. शशि प्रभा शास्त्री दून घाटी की चर्चित लेखिका थीं। इनके उपन्यास हैं- 'नावें', 'कर्क रेखा', 'मीनार', 'परछाईयों के पीछे', 'सीढ़ियाँ', 'बरसों के बाद', 'अमलतास', 'वीरान रास्ते' और 'झरना' इनके चार कहानी संग्रह हैं। अपने लेखन में ये महिलाओं के जीवन के विभिन्न पक्षों का सूक्ष्म विश्लेषण करती हैं। ये महादेवी कन्या महाविद्यालय देहरादून की हिन्दी विभाग की विभागाध्यक्ष थीं।

उत्तराखण्ड के साहित्यिक परिदृश्य की यदि बात करें तो कहा जा सकता है कि नव गठित राज्य ने जहाँ अन्य क्षेत्रों में प्रगति की है वहीं साहित्यिक क्षेत्र भी अछूता नही रहा। यह साहित्यिक परिदृश्य, दृश्य और श्रव्य भी है और पुस्तकाकार पठनीय भी हैं। साहित्य की दोनों विधाओं गद्य और पद्य में प्रचुर सामग्री प्रकाशित हुई है। सिनेमा और टेलीविजन के प्रभाव स्वरूप गढ़वाली, कुमाऊँनी गीत-संगीत की बाढ़ सी आ गई है। दृश्य रूप में गीतों का जो फिल्मीकरण हुआ, वह चौंकाने वाला है। किसी भी सुरूचिपूर्ण दर्शक के लिए गीतों का यह फूहड़ चित्रांकन और फिल्मीकरण कष्टप्रद तो है ही, साथ ही यह पहाड़ की सरल संस्कृति पर कुठाराघात भी है।

देवभूमि कहलाने वाला यह हिमालय क्षेत्र अधिकतर आध्यात्मिक, धार्मिक गतिविधियों से संबंधित साहित्य के लिये प्रसिद्ध है। चार धामों से संबन्धित साहित्य की प्रचुरता संभवत: पर्यटन उद्योग के कारण ही है।

उत्तराखण्ड में सदा से ही महिलाओं की प्रमुख भूमिका रही है। मातृ शक्ति के सहयोग से ही उत्तराखण्ड आन्दोलन ने गति पकड़ी और सर्वत्र इसकी चर्चा भी हुई। किन्तु उत्तराखण्ड बनने के बाद स्थिति बदल गई। सत्ता हाथ में आते ही पुरुष प्रधान वर्चस्व स्थापित हो गया। केवल इक्की-दुक्की महिलाओं को ही शासन में भागीदारी मिली। वे निर्वाचित हो कर आई थीं। कहते हैं कविता का जन्म दु:ख से हुआ यही कारण है कि उत्तराखण्ड बनने के बाद

कवयित्री सम्मेलनों की बाढ़ सी आ गई, अंतर्मुखी हो कर अब महिलाओं की शक्ति कविताओं में प्रस्फुटित होने लगी। समाचार पत्रों को उठाकर देखिये तो कवयित्री सम्मेलनों की भरमार है। इस कालखण्ड में कुछ अच्छी रचनायें पुस्तकाकार रूप में उत्तराखण्ड के सामने आईं।

श्रीमती ललिता चन्दोला वैष्णव ने अपने स्व० पिता के नाम पर 'पं० विश्वंभर दत्त चन्दोला शोध संस्थान' के अन्तर्गत कई पुस्तकें प्रकाशित की। स्वतंत्रता पूर्व 'गढ़वाल की पत्रकारिता' तथा 'शोध ग्रन्थ गढ़वाली' ये दो पुस्तकें उत्तराखण्ड राज्य बनने के बाद प्रकाशित हुई। इससे पूर्व इनकी रचनायें इस प्रकार हैं- 'जवाहर लाल नेहरू', 'अमृतसर की डायरी के चार पृष्ठ', 'नारी दर्शन'।

गढ़वाली भाषा में कुछ अच्छी रचनायें पुस्तकाकार रूप में उत्तराखण्ड के सामने आई 'पिठे पैरलो बुराँस' विशुद्ध गढ़वाली में रचित श्रीमती वीणापाणी जोशी की रचना है। इस रचना में विषयों की विविधता देखते ही बनती है।

एक अन्य कवयित्री हैं **श्रीमती सावित्री काला**। इनकी छह काव्य पुस्तकें तथा तीन कथा संग्रह प्रकाशित हो चुके हैं। 'यह मेरी नदी है', 'दायराख रिश्ते', 'सप्तपदी, नारी' तथा 'अर्द्धशती' कहानी संग्रह हैं।इनमें मानवीय संबंधों का ताना-बाना बड़े प्रयत्न से बुना गया है। समसामयिक विषयों पर काव्यात्मक अभिव्यक्ति दर्शनीय ही नहीं पठनीय भी है।

श्रीमती कमलेश्वरी मिश्रा की दो काव्य पुस्तकें 'सुरभित समीर' और 'धरती की नब्ज' प्रकाशित हो चुकी हैं।

'कुंती विमर्श' एक प्रबन्ध काव्य है। इसकी रचयिता हैं **श्रीमती भारती पांडेय**। इसमें महाभारतकालीन कुंती के आत्म मंथन का विशद वर्णन किया गया है। इस खण्ड काव्य का सफल नाट्य रूपान्तर और मंचन (श्री दिनेश उनियाल के निर्देशन में) नगर सभागार में हो चुका है। श्रीमती भारती पांडेय की यह रचना विचार-मंथन की दृष्टि से भव्य है। विषयों की विविधता और काव्य का संकेत आपकी रचनाओं को विशिष्ट बनाता है।

इसी प्रकार **श्रीमती रजनी कुकरेती** और **श्रीमती नीता कुकरेती** की रचनायें अपनी गीतात्मकता के साथ प्रस्तुतीकरण से अति विशिष्ट बन जाती हैं।

उत्तराखण्ड की महिला साहित्यकारों में अन्य उल्लेखनीय नाम हैं- श्रीमती उमा भट्ट, श्रीमती बसंती मठपाल, श्रीमती विद्यावती शर्मा, श्रीमती कृष्ण खुराना ये सभी अपनी स्फुट रचनाओं से साहित्य की श्रीवृद्धि कर रही हैं।

संपादन के क्षेत्र में **श्रीमती उमा भट्ट** का नाम उल्लेखनीय है, जो विगत इक्कीस वर्षों से 'उत्तरा' त्रैमासिक पत्रिका का संपादन कर रही हैं। यह नैनीताल से प्रकाशित होती है। विशेष रूप से नारी पर केन्द्रित यह पत्रिका महिलाओं के क्षेत्रीय, राष्ट्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय मंच पर सहभागिता को विशद रूप से दर्शाती है। यह महिला पत्रिका महिला सरोकारों से संबंधित होने के साथ ही उत्कृष्टता की दृष्टि से भी पठनीय है।

डॉ॰ सौभाग्यवती सिंह की आत्मकथा 'यादें' तत्कालीन परिदृश्य में नारियों की उपस्थिति दर्शाती है।

रिपोर्ताज के रूप में महिला समाख्या संस्था की रिपोर्ट तत्कालीन उत्तराखण्ड की नारी की व्यथा और विशेषता दर्शाती है। "ना मैं चिरिया ना मैं बिरवा" नामक पुस्तक घरेलू हिंसा पर सशक्त दस्तावेज है। श्रीमती गीता गैरोला इस दिशा में विशेष कार्य कर रही हैं। कतिपय महिलाओं द्वारा किये गये शोध शोधग्रन्थ के रूप में साहित्य की श्रीवृद्धि कर रहे हैं। श्रीमती गिरिबाला जुयाल कृत शोध "भजन सिंह और उनका कालवादी साहित्य" तथा कविता जोशी की "कर्मभूमि स्वतंत्रता संग्राम से पुनर्निर्माण तक" ऐसे ही ग्रन्थ हैं। श्रीमती नईमा खान उप्रेती ओर बहन राधा भट्ट का लेखन साहित्य क्षेत्र में उल्लेखनीय है। श्रीमती मालती ग्वाल की शोध पुस्तक 'मध्य हिमालय की जोहार जनजाति की महिलायें', सुदूर हिमालय क्षेत्र की महिलाओं के जीवन पर विशेष प्रकाश डालती है।

नवीन साहित्य रचना के साथ पुरानी गीत विधाओं का संरक्षण भी साहित्य के अन्तर्गत आता है। इसी प्रकार की एक वि धा है "जागर" इसमें पौराणिक आख्यानों पर आधारित विशेष देवगीतों द्वारा देवताओं के आवाहन हेतु गीत प्रस्तुत किये जाते हैं। रात्रि के समय चौक में एकत्रित जन समुदाय के सम्मुख ढोल, धकुली के साथ मानवीय स्वर एक रहस्यमय सम्मोहक वातावरण तैयार करते थे, पूरी रात जागर चलता था, किन्तु अब यह मंच की विधा बन गई है। इस विधा को प्रस्तुत करने में श्रीमती बसंती बिष्ट के नाम से सभी परिचित हैं।

इस प्रकार कहा जा सकता है कि अतीत की भांति वर्तमान में भी उत्तराखण्ड की महिलायें साहित्य के क्षेत्र में अपना बहुआयामी योगदान दे रही हैं।

❑❑

उत्तराखण्ड लोक साहित्य में नारी का चित्रण

❑ नीता कुकरेती

भूमिका-

''खण्डाः पंच हिमालय कथिता नेपाल कूर्मांचलौ।
केदारोऽयं, जलंधरोऽयं रुचिरः कश्मीर संज्ञोऽन्तिम।।

अर्थात हिमालय में पाँच खण्ड हैं। एक केदार खण्ड, दूसरा कूर्मांचल तीसरा जलंधर खण्ड (वर्तमान में जो पंजाब क्षेत्र है) चौथा खण्ड नेपाल तथा पाँचवां खण्ड कश्मीर क्षेत्र के नाम से जाना जाता है।

उत्तराखण्ड केदार खण्ड व मानस खण्ड (वर्तमान में गढ़वाल व कुमाऊँ क्षेत्र) को कहा गया है। मध्य हिमालय में स्थित कुमाऊँ और गढ़वाल संभाग को उत्तर प्रदेश की जनगणना रिर्पोट में पश्चिमी हिमालय कहा गया है, जिसका क्षेत्रफल लगभग 53119 वर्ग किमी॰ है।

उत्तराखण्ड उत्तरापथ का एक खण्ड- पाणिनि ने पाटलीपुत्र से कपिशा जाने वाले मार्ग का नाम उत्तरापथ दिया है। जिन प्रदेशों से होकर उत्तर दिशा में यह मार्ग जाता था, उसे उत्तरापथ कहा जाने लगा। पाली साहित्य में भी उत्तरापथ का उल्लेख है। मनु ने उत्तरापथ के स्थान पर उत्तर प्रदेश का उल्लेख किया है, जो आर्यवृत की सीमा के अन्दर हिमालय के दक्षिण में और विन्ध्यांचल के उत्तर में है। प्रसिद्ध इतिहासकार डॉ॰ शिवप्रसाद डबराल का मत है कि उत्तराखण्ड शब्द का पूर्व शब्द उत्तर, उत्तरापथ से लिया गया है तथा दूसरा शब्द खण्ड जिसका सामान्यतः अर्थ अंश या भाग होता है, किन्तु खण्ड का प्रयोग इतिहास में प्रशासनिक क्षेत्र के लिये भी मिलता है। जम्बूद्वीप का एक खण्ड भरतखण्ड था, इस तथ्य से सभी परिचित हैं।

प्राचीनकाल में भारत में इस प्रकार के कई खण्ड थे। शैव सम्प्रदाय के अनुसार कुल नौ खण्ड हैं, जिनमें चार हिमालय में हैं। हिमालय के चार खण्डों के नाम हैं- हिमाद्रिखण्ड, मानसखण्ड, कैलाशखण्ड व केदारखण्ड तथा शेष अन्य खण्डों के नाम हैं-पातालखण्ड, काशीखण्ड, रेवाखण्ड, ब्रह्मौत्तरखण्ड तथा नगरखण्ड। पण्डित हरिकृष्ण रतूड़ी ने हिमालय

में पाँच खण्डों का उल्लेख किया है जो नेपाल, कश्मीर, जलंधर, केदार व कूर्मांचल हैं। ऐतिहासिक चरणों में उत्तराखण्ड के क्रमशः अनेक नाम रहे हैं। अशोक के कालसी अभिलेख में इसका नाम अपरान्त है। टाल्मी ने इसके लिये कुलीन्द्राइन का प्रयोग किया है, महाभारत काल में इसे कुलिन्दराज्य कहा गया है। दक्षिण गढ़वाल अर्थात् देहरादून क्षेत्र में इसका एक नाम शत्रुघ्न भी था। गुप्तकाल में कृतपुर उत्तराखण्ड को और कामरुप नेपाल को कहा जाता था। गुप्तकाल के पश्चात पौरववंशी नरेशों ने इसे पर्वतकार राज्य भी कहा।

उत्तराखण्ड का साहित्य- हिमालय का हृदय प्रदेश होने के नाते इस क्षेत्र से अनादिकाल से सत्काव्य का सृजन हुआ है। कहा जाता है कि महर्षि वेद व्यास ने पुराणों की रचना इसी क्षेत्र में की थी। पुराणों में वर्णित प्रसंगों और प्राकृतिक दृश्यों से इस तथ्य की पुष्टि हो जाती है। स्कन्दपुराण का केदारखण्ड तो पूर्णतः उत्तराखण्ड का गढ़वाल क्षेत्र ही है। विश्व कवि कालिदास की रचनाओं में इसी क्षेत्र की आभा व सुषमा का दर्शन मिलता है। कालिदास ने हिमालय-अल्कापुरी का जो कल्पनातीत वर्णन किया है वह यही गढ़वाल क्षेत्र है।

उत्तराखण्ड के साहित्य को निश्चित समय का लेखा दिया जाना अत्यन्त कठिन है किन्तु अनेक स्त्रोतों और कुछ प्राप्त पाण्डुलिपियों के आधार पर यह निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि उत्तराखण्ड में ज्योतिष, वैद्यक तथा काव्य और विविध विषयों के साहित्य सृजन की परम्परा अति प्राचीन रही है। प्राचीन काल में संस्कृत, कालान्तर में अरबी, फारसी तथा ब्रज में भी साहित्य की रचना हुई। वर्तमान में राजकीय व्यवहार, शिक्षा व साहित्य में खड़ी बोली हिन्दी का प्रयोग किया जा रहा है किन्तु बोलचाल में क्षेत्रीय भाषाएं प्रयुक्त हो रही हैं।

उत्तराखण्ड में दो प्रकार की साहित्यिक परम्पराएं मिलती हैं-

1. मौखिक या लोक साहित्य परम्परा
2. लिखित या शिष्ट साहित्य परम्परा

मौखिक साहित्य या लोक साहित्य- "लोक साहित्य मौखिक अभिव्यक्ति है जो भले ही व्यक्ति विशेष द्वारा रचा गया हो, पर जिसे सामान्य लोक समूह अपना ही मानता है और जिसमें लोक की युग-युगीन वाणी समाहित रहती है, जिसमें लोकमानस प्रतिबिम्बित रहता है, जिसमें रचना कौशल सायास नहीं रहता, जिसका प्रत्येक शब्द, प्रत्येक स्वर और लय-लहजा लोक का अपना है।"

लोक साहित्य जातीय चरित्र के अध्ययन का स्त्रोत हे क्योंकि लोकसाहित्य में ही किसी समाज के हर्ष उल्लास, दु:ख-सुख, रहन-सहन, आचार व्यवहार, रीतिरिवाज व संस्कृति के दर्शन होते हैं। यह जन को लोक से जोड़ने की मजबूत कड़ी है। लोक मानस की मौखिक अभिव्यक्ति ही लोक साहित्य है। इसमें मानवता के विकास के उस चरण की संस्कृति सुरक्षित एवं निहित है, जब अभी लेखन पद्धति का प्रादुर्भाव नहीं हुआ था या उस काल खण्ड के लोग पढ़ने लिखने से विज्ञ नहीं थे।

जन्त्र मन्त्र, पहेली, लोकोक्तियों, कहावतों, लोकगीत, लोकगाथाओं आदि के रूप लोक साहित्य के ऐसे माध्यम हैं जिनमें प्रत्येक जाति अपनी पद्धति, जीवनानुभव व संस्कृति अपनी आने वाली पीढ़ी को सौंपती है।

उत्तराखण्ड का लोक साहित्य- उत्तराखण्ड का समाज अपने मौखिक काव्य की सृजना में निरन्तर व सतत् तत्पर रहा है और आज भी है इसीलिए उसका लोकसाहित्य अत्यन्त समृद्ध है। ये कृतियां लिखित पुस्तकों के रूप में न होकर लोकगीत, लोककथाओं, लोकगाथाओं, लोकोक्तियों के रूप में जनमानस में सुरक्षित हैं तथा एक दूसरे के मुंह से कही सुनी जाकर एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी की यात्रा करती रही हैं।

आरम्भिक युग के लोकसाहित्य में धर्म, विश्वास, संस्कार, कर्मकाण्ड तथा काव्य सब कुछ एक साथ है, बाद में धीर-धीरे लोकसाहित्य की कलाएं स्वतंत्र होती चली गईं, उसे लोकसाहित्य की विधाओं के रूप में देखा जा सकता है। उत्तराखण्ड लोकसाहित्य की निम्नलिखित विधाएं दृष्टिगत होती हैं-(1) लोकगीत (2) लोकगाथाएं (3) लोककथाएं (4) लोकोक्तियां कहावतें और पहेलियां (5) साधनात्मक ज्ञान व जादू टोना।

उत्तराखण्ड के लोकसाहित्य में नारी का चित्रण- उत्तराखण्ड के लोकसाहित्य में नारी का चित्रण प्रत्येक सोपान पर दिखाई देता है। उत्तराखण्ड की भूमि शिव-पार्वती प्रदेश कहलाती है। ऐसी स्थिति में विविध गीतों के माध्यम से जहाँ देवी पार्वती व शिव का विवाह हो या आमजन का या अन्य कोई और विषय, नारी चित्रण सर्वथा प्रदर्शित होता है। उत्तराखण्ड के लोकसाहित्य में निम्न बिन्दुओं के द्वारा नारी चित्रण को बताया जा सकता है। इस आलेख में गढ़वाल में प्राप्त लोकसाहित्य को ही लिया गया है।

(अ) लोकगीत- उत्तराखण्ड में कुछ प्रचलित लोकगीत परम्परा जो नारी विषय से युक्त हैं निम्न प्रकार से हैं-

(1) **धार्मिक गीत**- धार्मिक आयोजन में गाये जाने वाले लोकगीत में नारी गीत सर्जना की सशक्त माध्यम है। इसमें मांगल गीत का नाम प्रमुखता से लिया जा सकता है। मांगल गीत धार्मिक या सामाजिक अवसरों पर गाये जाने वाले गीत हैं जिनमें समाज की मंगल कामना की जाती है। उत्तराखण्ड में मांगल गीत प्राय: महिलाओं द्वारा गाये जाते हैं। विभिन्न सामाजिक अवसर, जैसे- चूड़ाकर्म संस्कार, विवाह संस्कार आदि पर गाये जाने वाले इन गीतों में नारी विषय का उल्लेख मिलता है। यथा- विवाह के अवसर पर जब लड़की के हल्द बान होता है तब कहा गया है-

"किलै ह्वाया कुण्ड काजौल हे किलै ह्वाया सुरिज धूमिल
तल्या देश पार्वती नहेन्दी हे, तभी ह्वाया कुण्ड काजौल"

इसी तरह फेरों के समय गढ़वाल में बहुत प्रचलित एक गीत जो आज भी प्राय: गाया जाता है-

"पहलो फेर फेर लाडी कन्या छै कुंवारी
दूजो फेर फेर लाडी ब्बे बाबू क प्यारी"

और अन्तिम फेरे में कहा गया है कि अब तू ससुराल की कर्तव्यनिष्ठ बहू हो गई है।

(2) **ऋतु गीत**- उत्तराखण्ड में ऋतुओं के गीत मुख्यत: निम्नलिखित प्रकार से वर्गीकृत किये जा सकते हैं-

1. बासंती गीत या थड़्यागीत, होरी गीत
2. चौमासा- अर्थात् वर्षा ऋतु के गीत
3. बारामासा- अर्थात् बारह महीनों के अलग-अलग गीत

उक्त सभी प्रकार के गीतों का गायन प्राय: महिलाएं ही करती हैं और इनके विषय भी नारी प्रधान ही होते हैं। उत्तराखण्ड में नारी की भूमिका उल्लेखनीय है। चाहे खेत खलिहान सम्भालने का कार्य हो या अपने परिवार का भरण-पोषण- वह पुरुषों से अधिक ही सक्रिय रहीं। पेड़ों को बचाने के लिए किये गये गौरा देवी व रिखणीखाल ब्लॉक की महिलाओं के योगदान से सभी विज्ञ हैं। पर्यावरण संरक्षण व पेड़ों की महत्ता पर गाया जाने वाला एक लोकगीत इस प्रकार है-

"सेरा की मिंडोली, नै डाली पंय्यां जामी
क्वी दूध चढ़ौला, नै डाली पंय्यां जामी
क्वी पाणी चरौय्ला, नै डाली पंय्यां जामी"

उक्त थड़या गीत में महिलायें पंय्यां (कदम्ब) के पवित्र वृक्ष के संरक्षण व संवर्धन हेतू प्रयासरत् हैं क्योंकि इस वृक्ष की लकड़ी को पूजनीय एवं देवताओं की प्रिय माना गया है। शंकराचार्य आदि के दण्ड इसी पंय्यां के होते हैं।

(3) **श्रृंगार गीत**- उत्तराखण्ड में श्रृंगार गीतों के अन्तर्गत प्रेम-विरह व मिलन के गीत आते हैं। मिलन के गीत की एक बानगी देखिए- "सुपा लाई दैण तू मेरी आगास सुवा, मैं तेरी गैण"अर्थात् नायिका कहती है तू मेरा आकाश है और मैं तेरी तारिका। इसी प्रकार एक उदाहरण में पति अपनी पत्नि से कहता है- "देवी की तखत, तू मेरी जोगीण प्यारी, मैं तेरो भगत" अर्थात् तू मेरी जोगिन है और मैं तेरा भक्त हूँ। विरह या वियोग का एक प्रसिद्ध गीत है-

"कख होलू कन होलू माधोसिंह
तेरी राणी बौराणी माधोसिंह
दणमण रोन्दी माधोसिंह"

वीर भड़ माधोसिंह को राजा महिपत शाह द्वारा शत्रु को तिब्बत तक खदेड़ने के कारण कई वर्षों तक घर न आ पाने के कारण उसकी पत्नि रुकमा व माता द्वारा दु:खी मन की व्यथा का गीतों द्वारा प्रकट किया जाना उत्तराखण्ड की नारी की संवेदनशीलता को प्रदर्शित करता है।

(4) **खुदेड़ गीत**- उत्तराखण्ड का लोकमानस संवेदनशील व भावुक है। खुदेड़ गीतों के रूप में उत्तराखण्ड का लोक साहित्य समृद्ध है। वास्तव में पर्वतीय प्रदेश की विशिष्ट भौगोलिक परिस्थिति के कारण अधिकांश नारियों की विवाह के बाद अपने माता-पिता से न मिल पाने की विवशता, आर्थिक अभाव, पति की रोजगार हेतु पहाड़ से बाहर नौकरी पर जाने की विवशता या पति का सेना में जाने व लम्बे समय तक घर न आ पाने या वैधव्य से उपजी विरह वेदना यहाँ के लोक साहित्य में काफी अधिक उपलब्ध होती है। खुदेड़ गीतों में अनेक लोकप्रिय व प्रसिद्ध गीत प्रचलित हैं, यथा-

1. राडाकी रडवाड़ी म्वारी रूणैली झूमैलो.....
   जौंका होला भाई मैत बुलाला झूमैलो.....

2. जावा भग्यान मैत जावा, मेरो रैबार माँ मू लिजावा
   माँ मू बोल्यान माँजी मेरी, तेरी छोरी शारदा रोन्दी रई

3. प्यारी घूघती जैली मेरी माँजी तैं पूछी ऐली
   मेरी आग आग भभरौण लैगी, मेरी गौला बाडॅली लैगी

उक्त तीनों गीतों में ससुराल में रहने की विवशता, अपने माता-पिता, भाई-बहनों से मिलने की आतुरता तथा घूघती के माध्यम से संदेश भेजना आदि अनेक गीत हैं जो भिन्न-भिन्न परिस्थिति में उपजी विवशता को चित्रित करते हैं।

(ब) लोकगाथाओं में नारी का चित्रण- उत्तराखण्ड में अनेक लोकगाथाएं हैं जिनमें नारी के त्याग, साहस व जीवटता का वर्णन मिलता है। तीलू रौतेली की वीरगाथा से सभी विज्ञ हैं। इसी तरह विरमा डोटियाली की गाथा भी उल्लेखनीय है। उत्तराखण्ड में लोक गाथाओं को मुख्य परम्परा के आधार पर चार भागों में विभाजित किया गया है-(1) जागर गाथाएं (2)वीर गाथाएं (3) प्रणय गाथाएं (4)चैती गाथाएं। इन सभी गाथाओं में नारी विषयक गाथाएं हैं। कुछ प्रमुख नारी विषयक गाथाओं को निम्न प्रकार से देखा जा सकता है।

(1) **जागर गाथाएं**- जागर गाथाओं के रूप में उत्तराखण्ड का लोक साहित्य काफी अधिक समृद्ध है। गढ़वाल में प्रचलित **देवी जागर** आज भी मुख्य रूप से सुने जा सकते हैं। इसी प्रकार रुकमणी गाथा में कृष्ण के प्रति रुकमणी का अनन्य प्रेम दिखाया गया है। **कुसुमा कोलिन** की गाथा में कृष्ण को एक सामान्य नायक के रूप में चित्रित किया गया है जो कुसुमा को देखे बिना ही केवल नहाते समय उसकी एक टूटी हुई लट पर मुग्ध हो गये, इसी प्रसंग पर कुसुमा के सौन्दर्य का उल्लेख इस गाथा में मिलता है। सुजू की **सुनारी गाथा** में कृष्ण द्वारा सुजू की पत्नि को स्वप्न में देखना तथा उसके सौन्दर्य पर मोहित होना, सुनारी का अपने पति पर अनन्य प्रेम व कृष्ण द्वारा सुनारी को उसका पति सौंपना आदि की गाथाएं लोक मानस में पाई जाती हैं। इससे उत्तराखण्ड की नारियों के चारित्रिक आदर्श की ऊँचाईयों का भान होता है।

(2) **वीर गाथाएं**- पुरुष प्रधान समाज होने के नाते उत्तराखण्ड में वीर गाथाओं में अधिकतर वीर व भड़ों की गाथाएँ अधिक प्रचलित हैं। यथा- माधोसिंह भण्डारी, कफ्फू चौहान, कालू भण्डारी, सूरूजू कुँवर, गढू सुमरियाल आदि अनेक गाथाएं हैं। इन वीरों के शौर्य व वीरता के किस्से कहे गये हैं। वीर गाथाओं में नारी वीरता की कुछ गाथाएँ प्रचलित हैं। गढ़वाल क्षेत्र में वीरांगना तीलू रौतेली के साहस की मिसाल झांसी की रानी लक्ष्मीबाई से की गई है जिसने कत्यूरी शासक से बदला लेते हुए अपने प्राणों का बलिदान कर दिया। इसी तरह बिरमा डाटियाली के साहस तथा वीर वधू देवकी के साहस की गाथाएं भी विशेष रूप से इस क्षेत्र में प्रचलित हैं। ये सभी गाथाएँ उत्तराखण्ड की नारियों के साहस व शौर्य का प्रमाण देती हैं।

(3) **प्रणय गाथाएं**- उत्तराखण्ड लोक साहित्य में प्रणय गाथाओं की बहुत लम्बी सूची है। प्रणय नारी की सहभागिता के बिना संभव नहीं है। गढ़वाल में प्रचलित प्रमुख प्रणय गाथाओं में जीतू बगड्वाल, फ्यूंली रौतेली, जसी गाथा, रामी बौराणी आदि अनेक गाथाएँ हैं। जीतू बगड्याल में जीतू पर आछरियों का मुग्ध होना तथा अन्त में उसे हर लेना पराकायी नारियों के विषय में भी जानकारी उपलब्ध कराता है। फ्यूंली रौतेली में विलासपूर्ण अवैध प्रेम के भंयकर दुष्परिणाम को चित्रित किया गया है। जसी गाथा में जसी के निष्कलंक होने पर पुन: जीवन प्राप्त करना और उसके पति वीरवा भण्डारी द्वारा उसके प्रति अनन्य प्रेम का चित्रण है। रामी की गाथा में रामी के सात्विक चरित्र का वर्णन है जिसमें रामी वर्षों बाद घर आये अपने पति को न पहचान पाने के कारण उसके प्रणय निवेदन को गाली देते हुए धिक्कारती है और अपने पति के प्रति समर्पण व प्रेम होने की बात कहते हुए आजीवन प्रतीक्षरत रह जाने की बात कहती है। इस लोक गाथा द्वारा लोक मानस में नारी के समर्पण, त्याग व निष्ठा का दर्शन कराया गया है।

(4) **चैती गाथाएं**- इन गाथाओं को चैत्र माह में गाँव-गाव जाकर औजियों व बादियों द्वारा गाया जाता है। इनमें देवी देवताओं के साथ-साथ तत्कालीन समाज की प्रमुख घटनाओं व विशिष्ट व्यक्तियों के चरित्र का गायन किया जाता है जिससे उस समाज की प्रसिद्ध विभूतियों की जानकारी सम्पूर्ण लोक में फैल जाती है।

उपरोक्त तथ्यों के अतिरिक्त नारी के सामाजिक जीवन का चित्रण भी लोकसाहित्य में मिलता है। इस पर संक्षिप्त चर्चा करना आवश्यक है। उत्तराखण्ड में जीवन के केन्द्र में नारी है, अल्प आयु में विवाह, वैधव्य की मार व सास की क्रूरता का चित्रण लोकगीतों में

बहुतायत में मिलता है। ऐसी ही परिस्थिति में कही गई ये पंक्तिया– "तेल कड़ाही जनु लाये भाग, तनी मेरी सासू तनी मेरो भाग" अर्थात तेल की कड़ाही में जैसे सब्जी बनाई जाती है, ऐसा ही मेरा भाग्य है, ऐसी ही मेरी सास। एक अन्य गीत में सौतेली सास के आतंक व व्यवहार का वर्णन इन पंक्तियों में मिलता है–

धार मा उरख्यालू ब्बे चौ दिसा बथौंउं।
तनी आलो झंगोरो ब्बे कूटेंद भी नी च।
तनी मौस्याण सासू ब्बे, बचेंदी भी नी च॥

अर्थात् मेरी सास पहाड़ी की चोटी पर स्थित ओखली से मुझे झंगोरा कूटकर लाने को कहती है जहाँ चारों तरफ से हवा आती है और झंगोरा भी गीला है वह कूटा नहीं जाता। सास सौतेली है जो मुझसे बात नहीं करती। इसी तरह अन्य उदाहरण में मिलता है–

जिया माँ की होली मीं येकुली भौंर।
बाबा की लड़यूंत छर्यीं, जिया की अशरुपी।
स्वामी को होली मैं दालिमी जैसो फूल।
सासू मेरी निरदया भरौंदी च पाणी॥

अर्थात मैं माँ की अकेली भ्रमरी हूँ पिता की लाड़ली, माँ की अशर्फी हूँ, स्वामी की दाड़िम की कली हूँ किन्तु मेरी सास निर्दयी है, मुझसे पानी भरवाती है।

उपसंहार– विषय अत्यधिक व्यापक एवं शोध का विषय है। लोकसाहित्य जीवन लोक परम्परा व लोक भाषाओं के जीवित रहने पर सम्भव है। आज विश्व की लोक संस्कृति व भाषायें तेजी से समाप्त होती जा रही हैं। ऐसे में उत्तराखण्ड के लोकसाहित्य पर भी खतरे के बादल मंडरा रहे हैं। जब भाषा व बोली प्रयोग में नहीं रहेगी तो लोकसाहित्य से आगे आने वाली पीढ़ी वंचित हो जायेंगी। आवश्यकता है समस्त लोकसाहित्य को लिखित साहित्य में संरक्षित करने की, अन्यथा हम अपनी प्राचीन संस्कृति, परम्परा, रीति रिवाजों, खानपान व जीवन पद्धति को भविष्य तक पहुँचाने में नाकाम हो जायेंगे। शब्दों की सीमा व विषय की व्यापकता के कारण बहुत सी बातें इस आलेख में सम्मलित नहीं हो पाई हैं। इस आलेख में जो कुछ बताने का प्रयास किया गया है वह श्रेष्ठ साहित्यकारों के शोध व संकलन पर आधारित है।

❑❑

महिला रचनाकारों के मुख्य सरोकार

❑ कृष्णा खुराना

जब हम महिला के सरोकारों की बात करते हैं, तो रचना प्रक्रिया को और उन तमाम सामाजिक, राजनैतिक, सांस्कृतिक, ऐतिहासिक परिवर्तनों और दबावों को समझना आवश्यक है, जो महिला रचनाकारों के सरोकारों की दिशा निर्धारित करते हैं।

रचना प्रक्रिया में बाहरी संसार की प्रतिछाया, आंतरिक गहराईयों में उथल-पुथल मचा कर, सृजनधारा के रूप में रचनाकार के अंतस से प्रवाहित होती है। यह प्रतिछाया विभिन्न सृजनकारों को अलग-अलग रूपों में उद्वेलित करती है और यहीं से प्रस्फुटित होती है रचनाओं की विविधता, अपनी विशिष्टता और नवीनता के साथ।

यों तो बाह्य जीवन में होने वाले सामाजिक, राजनैतिक, सांस्कृतिक, जातीय, भाषाई एवं धार्मिक तथा अन्य स्थितियाँ और टकराव हर आम व्यक्ति को प्रभावित करते हैं, उसके विचारों और प्रतिक्रियाओं को संचालित करते हैं। अंतर केवल इतना है कि यही स्थितियाँ रचनाकार के भीतर एक ऐसा झंझावात उत्पन्न करती हैं कि वह शब्दों की लहरों पर तैर कर ही उसे शान्त कर पाता है। ये शब्द, ये रचनायें समाज का आइना भी बनती हैं और उसकी दिशा परिवर्तित करने का कारक भी। इतिहास गवाह है कि कई बार शब्दों के अस्त्र, युद्ध के हथियारों से अधिक मारक और सबल सिद्ध हुये हैं। शब्दों की इस शक्ति का मूल यही है कि हर रचनाकार के अपने वैचारिक सरोकार होते हैं जो उसकी रचना में प्रतिबिंबित होते हैं।

विश्व-साहित्य के विशाल भंडार में झांकें तो मैक्सिम गोर्की, टॉल्सटॉय, ब्रेख्त, चेखव, सिमोन दि बुआ, जियां पाल सार्त्र, एलडुअस हक्सले, सिंक्लेयर, मौखेज, वर्जिनिया वुल्फ, जर्मेन ग्रीयर, ऑस्कर वाइल्ड आदि अनेक साहित्यकारों की रचनाओं का विपुल भण्डार मिलता है। इन विभिन्न देशों और कालों के रचनाकारों ने, जिनमें महिलायें भी हैं और पुरुष भी, अपने-अपने देश और समय को अपने अलग सरोकारों की पृष्ठभूमि में विवेचित, व्याख्यायि व अभिव्यक्त किया है, साथ ही अपने समय की धारा को नई दिशा देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है।

विस्तृत परिप्रेक्ष्य में देखें तो स्त्री व पुरुष दोनों ही रचनाकारों के सरोकार सामाजिक, राजनैतिक, धार्मिक व सांस्कृतिक विषमतायें तथा अन्याय व शोषण का विरोध होते हैं। हर

रचनाकार का उद्देश्य, उसकी सदेच्छा, एक ऐसे समाज का निर्माण करने की होती है जहाँ आर्थिक असमानतायें न हों, राजनैतिक विद्रुपतायें न हों, भ्रष्टाचार, शोषण व अन्याय न हो। मनुष्य केवल राष्ट्रीय सीमाओं में न बंधकर, विश्व-समुदाय का सदस्य बन सके। लेखक का यह सरोकार रविन्द्रनाथ टैगोर की रचना में कुछ इस तरह व्यक्त हुआ-

हो चित्त जहाँ भयशून्य, भाल हो उन्नत,
हो ज्ञान जहाँ पर मुक्त, खुला यह जग हो-
घर की दीवारें न बनें कोई कारा
हो जहाँ सत्य ही स्त्रोत सभी शब्दों का
हो लगन ठीक से ही सब कुछ करने की,
हों नहीं रूढ़ियाँ रचती कोई मरूस्थल
पाये न सूखने इस विवेक की धारा।

(बांग्ला से प्रयाग शुक्ल द्वारा अनूदित)

इन सभी क्षेत्रों में महिला व पुरुष रचनाकारों के सरोकार समान होते हुये भी महिला रचनाकारों की कतिपय चिन्तायें और सरोकार पुरुष रचनाकारों से भिन्न होते हैं, कुछ ऐसे ही जैसे विश्व के विभिन्न देशों के रचनाकारों के सरोकार अपने-अपने देश की राजनैतिक, सामाजिक, आर्थिक व सांस्कृतिक स्थितियों के परिप्रेक्ष्य में अनेक अर्थों में भिन्न हो जाते हैं।

महिलाओं की सामाजिक, पारिवारिक व आर्थिक स्थितियाँ पूरे विश्व में ही पुरुषों से भिन्न रही है। भारत में महिलाओं की स्थिति को ऐतिहासिक बदलाव के संदर्भ में समझना समीचीन होगा। प्रागैतिहासिक भारतीय समाज के भीतर झाँकने पर विरोधाभासी स्थितियाँ देखने में आती हैं। एक ओर वैदिक साहित्य में ऐसे मातृसत्तात्मक समाजों का वर्णन मिलता है, जहाँ नारियों की विकसित और सम्मानित स्थिति दिखाई देती है, तो दूसरी ओर सामाजिक व पारिवारिक संदर्भों में स्त्रियों की भूमिका गौण होती गयी। उदाहरणार्थ मनुस्मृति में एक ओर **"यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते, रमन्ते तत्र देवता"** जैसा उद्घोष है तो दूसरी ओर यह भी व्यवस्था दी गयी है कि स्त्री कभी स्वतंत्र नहीं रहनी चाहिये। बचपन में पिता के आधीन, युवावस्था में पति के आधीन एवं वृद्धावस्था में पुत्रों के आधीन रहनी चाहिये। वैदिक साहित्य में वर्णित मातृसत्ता के अंत और पितृसत्ता के आरम्भ के विषय में विद्वान चिंतक एस०ए० डांगे को उद्धृत करना प्रासंगिक होगा। वे कहते हैं, "अगर हम कुटुम्ब के विकास को देखें तो यह परिवर्तन साफ दिखाई देता है। सबसे पहले हम देखते हैं कि जैसे ही वर्ण,

विनिमय और निजी सम्पत्ति की उत्पत्ति हुई, वैसे ही गृह युद्धों और गण युद्धों के साथ प्रजापति और गृहपति इतिहास में सबसे आगे आ गये। अदिति और दिति आदि माताओं के गणयुद्ध इतिहास में विलीन होने लगे। दूसरे, गोत्र अपत्य अब पिता पुत्रों की परम्परा के अनुसार होने लगे।" सत्ता पुरुष के हाथ में आते ही सारे सामाजिक विधान और व्यवस्थायें पुरुषों के द्वारा अपनी सुविधानुसार बनायी जाने लगी। स्त्री की भूमिका अब पुरुषों द्वारा बनाये गये विधानों के अनुसार चलने भर की रह गयी। भारतीय संस्कृति के आदर्श युगों में भी स्त्री का स्थान केवल अनुगामिनी का ही था। सीता, सावित्री, सती जैसे अनेक पौराणिक स्त्री चरित्रों की महानता का आधार यही था कि उन्होंने पुरुष सत्ता की महत्ता को निर्विरोध स्वीकार किया! उसे प्रतिष्ठित करने में अपने अस्तित्व को मिटा डाला।"

यूं तो पूरे विश्व में ही, और विशेषकर भारत में, पारिवारिक ढांचा स्त्रियों की गुलामी की ऐसी व्यवस्था बना, जिसके चलते इतने नारीवादी आन्दोलनों और अस्मिता की चेतना के बाद भी स्त्री मुक्त नहीं हो सकी। परिवार में पुरुष क्योंकि कमाता था, यानि पूंजी का स्वामी था, सो मालिक बन बैठा और स्त्री उसकी सहचरी के छद्मनाम से दासी की भूमिका में आ गयी।

परिवार की धुरी, सम्मान की प्रतीक, कुल लज्जा की रक्षिका, सहनशीलता, स्नेह की मूर्ति, देवी, अन्नपूर्णा आदि अनेक विशेषणों की भूल-भूलैया में भटका कर स्त्री को इतनी चतुराई से गुलाम बनाया गया कि वह इन्सान के रूप में अस्तित्व को भूलकर, पुरुषों द्वारा लादे गये मापदण्डों पर खरा उतरने में ही अपनी सार्थकता समझने लगी।

उन्नीसवीं व बीसवीं सदी विश्व में क्रान्तिकारी परिवर्तनों की सदियाँ रहीं। वैज्ञानिक आविष्कारों ने पूरे विश्व की तस्वीर बदल दी। यातायात के साधनों और संचार साधनों ने सम्पूर्ण विश्व को जैसे एक देश ही बना डाला। भारत में स्त्री शिक्षा के प्रसार के साथ-साथ पूरे विश्व की स्त्रियों की भाँति भारतीय स्त्रियों में भी अपनी दासता की स्थिति से बाहर आने की सुगबुगाहट बढ़ने लगी।

नारी मुक्ति की प्रखर पक्षधर लेखिका सियोन दे बुआ ने जब कहा "औरत पैदा नहीं होती, बना दी जाती है" या जॉन स्टुअर्ट मिल ने स्त्री पराधीनता पर विवेचात्मक लेख लिखे या किसी देश में नारीवादी विमर्श हुए, तो उन्हें शिक्षित भारतीय स्त्रियों ने भी पढ़ा, समझा

और अपनी मुक्ति की छटपटाहट उनके भीतर भी प्रबल होने लगी। परिणामत: आधुनिक युग तक आते-आते स्त्री विमर्श, समाज के वैचारिक परिदृश्य के केन्द्र तक पहुँच गया।

स्वभाविक था कि महिला रचनाकारों के सरोकारों का मुख्य बिन्दु नारी जीवन की अनखुली परतें बन गया। दुर्गा का मिथक मानों उनके भीतर पैठ कर उन्हें परिवार, परम्परा और समाज के दबावों के भार से हुंकार भरकर बाहर निकलने को प्रेरित करने लगा।

महिलायें अपनी आवाज बुलन्द करने लगीं- यह आवाज कहीं नारी आन्दोलनों में गूंजने लगी, तो कहीं साहित्यिक रचनाओं में। व्यवस्था के खिलाफ नारी मुक्ति का शायद पहला सबल उद्घोष मीरा की रचनाओं में दनदनाता बाहर आता है। जब मीराबाई थोपी हुई सभी परम्पराओं को एक झटके से तोड़कर कहती है- "मेरे तो गिरधर गोपाल, दूसरा न कोई" या "पग घुंघरू बांध मीरा नाची रे" तो एक स्त्री की अपनी शर्तों पर जीने और असमानता पर टिकी व्यवस्था के विरोध की क्रांतिकारी घोषणा के दर्शन होते हैं।

महिला रचनाकारों के मुख्य सरोकार साधारणतया नारी जीवन के संघर्ष, उसकी दुरूहतायें, समस्यायें, स्त्री-पुरुष सम्बन्धों की जटिलतायें, समाज व परिवार से उसके सम्बन्ध, धार्मिक, सांस्कृतिक, सामाजिक व राजनैतिक इकाइयों द्वारा शोषण आदि होते हैं किन्तु इन सरोकारों की रचनात्मक अभिव्यक्ति देश, काल, समाज की भिन्नता के कारण विविधता लिए हुए होती है।

कुछ प्रसिद्ध महिला रचनाकारों के सरोकार:-

सभी महिला रचनाकारों की रचनाओं का उल्लेख सीमित आलेख में सम्भव न होने की विवशता के कारण भिन्न-भिन्न काल-खण्ड व प्रदेश की विविधता के आधार पर चुनी गयी रचनाकारों व कृतियों की चर्चा करके महिला रचनाकारों को समझना अप्रासंगिक न होगा। इस पड़ताल में एक रोचक तथ्य यह भी सामने आया कि व्यक्तिगत जीवन के अनुभवों का महिला रचनाकारों के सरोकारों पर प्रभाव स्पष्ट लक्षित होता है।

काल-खण्ड के संदर्भ में देखें तो महादेवी वर्मा का नाम सबसे पहले उभरता है। उन्होंने जब रचनायें लिखनी आरम्भ की, वह अनेक अर्थों में स्त्री विरोधी समय था। स्त्रियों को पढ़ने की इजाजत नहीं थी। बचपन में ही प्राय: बेमेल विवाह कर दिये जाते थे। महादेवी का व्यक्तिगत जीवन एक प्रखर विद्रोही स्त्री का रहा है। उन्होंने सब वर्जनायें तोड़ी, उच्च शिक्षा

प्राप्त की तथा एकाकी जीवन चुना। दुर्भाग्यवश उनके साहित्य को पितृसत्तात्मक दृष्टि से एक-पक्षीय रूप से ही आंका गया और उन्हें केवल रहस्यवादी कवयित्री के रूप में स्थापित किया गया, जबकि सच्चाई यह है कि महादेवी की रचनायें एक ओर अंतस की गहराइयों में एक संवेगात्मक संसार की रचना करती हैं तो दूसरी ओर प्रखर नारीवादी विद्रोह की घोषणा करती हैं। उनका यह सरोकार, यह अन्याय के विरूद्ध स्वर मुखर होता है जब वे कहती हैं- "कीर का प्रिय, आज पिंजर खोल दो।" 1942 में लिखी उनकी पुस्तक "श्रृंखला की कड़ियां" तत्कालीन समाज में स्त्रियों की दयनीय स्थिति को उजागर करने वाली सशक्त रचना है।

उस पीढ़ी की एक और प्रसिद्ध हस्ताक्षर हैं आशापूर्णा देवी। स्कूली शिक्षा से वंचित, घर की चारदिवारी में पुस्तकें व पत्र-पत्रिकायें पढ़कर, रचना संसार में अपनी महत्वपूर्ण उपस्थिति दर्ज करने वाली आशापूर्णा देवी के लेखकीय सरोकार जहाँ एक ओर स्त्री जीवन की त्रासदी से जुड़ते हैं, वो दूसरी ओर एक पक्षीय सरोकार से बाहर, स्त्रियों के दोष, अपूर्णता, त्रुटियों को भी नज़रअन्दाज नही करते। अनेक कहानियों, बाल-कथाओं के अतिरिक्त उनका उपन्यास त्रयी, 'प्रथम प्रतिश्रुति', 'सुवर्णलता' और 'बकुल कथा' ने उन्हें प्रसिद्धि के उच्च शिखर तक पहुँचा दिया।

पिछली सदी में जिन महिला रचनाकारों के नाम साहित्याकाश में चमके, उनमें अमृता प्रीतम, कृष्णा सोबती, चित्रा मुदगल, मन्नु भण्डारी, मैत्रेयी पुष्पा, ममता कालिया, मृदुला गर्ग, नासिरा शर्मा, शिवानी, मृणाल पाण्डे जैसे कुछ नाम प्रमुख रूप से उभरते हैं।

अमृता प्रीतम नारी मुक्ति की प्रबल पक्षधर लेखिका हैं। वे संबंधों में थोपे हुये सामाजिक बन्धनों का विरोध करती हैं, लेकिन उनके तेवरों में कड़वाहट और तीखेपन की जगह एक संवेदनात्मक समझदारी और दृढ़ता है। उनकी मुख्य कृतियाँ है- 'रसीदी टिकट' (आत्मकथा), 'डाक्टर देव', 'बन्द दरवाजा', 'जलावतन', 'कोरे कागज' आदि उपन्यास तथा अनेक कहानी संग्रह व कविता संग्रह। उनकी कविताओं में स्त्री-मन के भीतर हिलोरें लेती भावनात्मक महीन तरंगों का बेचैन करता संगीत रचनाओं को संवेगात्मक आयाम देता है, जो अमृता प्रीतम के लेखकीय सरोकारों को नये धरातल पर ले जाता है। बानगी के तौर पर यह पंक्तियां देखिये-

"हसरतें आज़मा रही हैं आज कलम के जोर को -मैं गीत लिखती हूँ, कि हसरतों के गीत लिखने न पड़ें किसी और को।"

अमृता प्रीतम की भांति कृष्णा सोबती भी महिला स्वतंत्रता की प्रबल पक्षधर हैं। उनकी रचनाओं के मुख्य सरोकार थे- स्त्री-जीवन की अंतरंग परतें, उसकी दमित इच्छायें, आकाक्षायें और जिजीविषा का अदम्य साहस। साथ ही उन्होंने लोक-जीवन और सांस्कृतिक परिवेश को अपनी रेशा-रेशा खोलने वाली कला-दृष्टि और अनूठी भाषा शैली के माध्यम से रचनाओं में ढाला। उनके सर्वाधिक लोकप्रिय एवं चर्चित उपन्यासों 'डार से बिछुड़ी' तथा 'मित्रों मरजानी' की नायिकायें रोजमर्रा के सुख-दुख, संताप, आह्लाद, द्वंद्व झेलती अपनी इच्छाओं और आकाक्षाओं का दमन न कर, अदम्य जिजीविषा से भरी स्त्रियां हैं, जिन्हें अपने-अपने तरीके से अपनी स्वतंत्रता की खोज की भारी कीमत भी चुकानी पड़ती है। नारी मन की कोमलता का निर्मम शोषण करने वाले समाज का चित्रण कृष्णा सोबती की रचनाओं में बहुत स्वाभाविक और रोचक शैली में हुआ है। उनकी अन्य रचनायें हैं- 'यारों के यार', 'सूरजमुखी', 'जिन्दगी-नामा' आदि। उनकी सभी रचनाओं में नारी मुक्ति की पक्षधरता व मानवीय सरोकार दृष्टिगोचर होते हैं।

चित्रा मुदगल की रचनाओं का दायरा केवल स्त्री जीवन की मुक्ति न होकर, पूरा समाज और उसके भीतर समायी विषमतायें हैं, जिनका शिकार प्रायः स्त्री ही होती है। उनके सरोकार समाज के अनेक कोणों से जुड़े हैं, जिनमें परिवार भी है। परिवार की सत्ता कहानियों के विद्रोही स्वरों के चलते लगभग नगण्य ही हो चली थी, जिसे नये सिरे से चित्रा मुदगल ने रचनाओं के केन्द्र में ले लिया। ऐसा नहीं कि उनके सरोकार यहीं तक सीमित रहे, उन्होंने 'लाक्षागृह' नामक कहानी संग्रह में, "मामला और बढ़ेगा अभी" एवं "त्रिशंकु" जैसी कहानियों में झोंपड़पट्टी के किशोरों की मानसिकता पर भी लिखा। चित्रा मुदगल अपने सर्वाधिक चर्चित उपन्यास 'आवां' में एकदम नये सरोकार को लेकर सामने आई हैं। उपन्यास की पृष्ठभूमि बम्बई की ट्रेड यूनियनों और मज़दूर-संगठनों का दारुण जीवन संघर्ष है।

हिन्दी कहानी को नयी दिशा देने में मन्नु भण्डारी का नाम एक अलग पहचान रखता है। उनकी रचनाओं में रूढ़ियों के प्रति विद्रोह है तथा एक स्वस्थ आधुनिक दृष्टि को प्रतिपादित करने की कोशिश है। मन्नु भण्डारी की विशिष्टता है कि उनके नारी पात्रों में रुढ़ि का विरोध है, उन्मुक्तता का साहस है, लेकिन वे शिष्टता व शालीनता की सीमायें नहीं लांघतीं। उनकी प्रसिद्ध कहानियों, 'यही सच है', 'अकेली', 'खोटे सिक्के', 'मै हार गयी' आदि में नारी जीवन से जुड़े सरोकार हैं तो 'महाभोज' उपन्यास में राजनैतिक विद्रूपता का सशक्त चित्रण है।

मैत्रेयी पुष्पा के रचना सरोकारों की केन्द्र बिन्दु साधारण स्त्री की असाधारण जिजीविषा है। उनकी प्रमुख रचनाओं 'इदन्नमम्', 'अलमा कबूतरी', 'झूलानट', 'चाक' आदि में उनकी घटनाओं और चरित्रों पर सूक्ष्म पकड़ को देखा जा सकता है। मैत्रेयी पुष्पा की विशेषता है कि उनके सरोकार स्त्री जीवन की आंतरिक व बाह्य दुरुहतायें रही हैं, लेकिन परिवेश केवल शहरी मध्यवर्ग ही नहीं रहा, उन्होंने गाँव कस्बों और कबीलों के भिन्न-भिन्न नारी चरित्रों को भी अपनी रचनाओं के केन्द्र में रखा।

मन्नु भण्डारी की भांति ममता कालिया ने आंचलिकता का शहरीकरण होने के कारण मध्यवर्ग के संयुक्त परिवारों के टूटने की त्रासदी और बदलते सामाजिक परिवेश में एकल परिवार की विवशता जैसे बिन्दुओं पर गहराई से लिखा। उनकी रचनाओं में 'बेघर', 'नरक दर नरक' और 'प्रेम कहानी' अपनी सहजता और स्वाभाविकता के कारण चर्चा में रही।

मृदुला गर्ग का लेखन एकदम नये तेवर, नया खुलापन और भीतर उबलते यौनिकता व प्रेम के संवेगों की सच्चाई को लेकर सामने आया। उनके उपन्यासों में 'चित कोबरा', 'उसके हिस्से की धूप', 'वंशज' व 'कठ गुलाब' चर्चित रहे। मृदुला गर्ग की रचनाओं के केन्द्र में काम-केन्द्रित स्त्री-पुरुष संबंधों की जटिलताओं की पड़ताल रही है।

नासिरा शर्मा के लेखन सरोकारों के केन्द्र में धर्म, समाज और परम्पराओं के बोझ तले छटपटाती औरत है। आधुनिक परिवेश में जुड़ते टूटते इन्सानी रिश्ते और उनमें स्त्री की भूमिका उनके सरोकार रहे हैं। उनके मुख्य उपन्यास हैं- 'सात नदियां एक समन्दर', 'शाल्मली', 'ठीकरे की मंगनी', और 'जिन्दा मुहावरे'।

हिन्दी साहित्य की मुख्य धारा में जिन उत्तराखण्ड की लेखिकाओं ने अपना महत्वपूर्ण स्थान बनाया है उनमें शिवानी, मृणाल पाण्डे, अर्चना पैन्यूली, शशी प्रभा शास्त्री, कुसुम चतुर्वेदी के नाम प्रमुख हैं। अब एक नया नाम जुड़ा है कुसुम भट्ट का। इन दिनों विद्या सिंह की कहानियाँ भी बड़ी पत्रिकाओं में चर्चित हो रही हैं। विद्या सिंह के रचना सरोकार पूरे सामाजिक फलक पर विस्तार पाते हैं।

शिवानी के उपन्यासों व कहानियों में कुमाऊँ के पहाड़ी समाज का विश्वसनीय, रोचक एवं मर्मस्पर्शी वर्णन है। विशेष भौगोलिक क्षेत्रों की आर्थिक, सामाजिक व धार्मिक परम्पराओं की पृष्ठभूमि में लिखी रचनाओं का प्रभाव पाठक के मन पर गहराई से पड़ सके, वह उस वातावरण को ठीक समझ सके, इसके लिए जिस चैतन्य-दृष्टि की समग्रता की आवश्यकता

है, वह शिवानी और अर्चना पैन्यूली दोनों में ही गहराई से उपस्थित है। पहाड़ी औरत का परम्पराओं में जकड़ा जीवन और कठोर परिश्रम से बंधे दिन-रात, दोनों ही रचनाकारों के सरोकार रहे हैं। डॉ॰ शशि प्रभा शास्त्री व डॉ॰ कुसुम चतुर्वेदी दोनों की रचनाओं के सरोकार मध्यवर्गीय स्त्री की उलझनों में फंसी जिन्दगी है। कुसुम भट्ट की कहानियों में पहाड़ी स्त्रियों की कठिनाइयों और संघर्षों का मर्मस्पर्शी चित्रण है।

उत्तराखण्ड राज्य के भीतर जिन महिला रचनाकारों ने अपनी उपस्थिति दर्ज करायी है उनमें कुछ सुपरिचित नाम हैं- वीणापाणी जोशी, नीता कुकरेती, गीता गैरोला, बीना बैंजवाल, भारती पाण्डे, बसन्ती मठपाल, सावित्री काला, सुमित्रा धूलिया, सविता मोहन, सरोजनी नौटियाल, उमा भट्ट, दिवा भट्ट, कुसुम नौटियाल, जयन्ती सिजवाली आदि। इनके अतिरिक्त अनेक महिला रचनाकार अपने-अपने क्षेत्र में रचनाकार्य में लगी हैं। उत्तराखण्ड राज्य की महिला रचनाकारों के मुख्य सरोकार हैं पारिवारिक संबंध, पर्वतीय संस्कृति व समाज के परिप्रेक्ष्य में स्त्री जीवन, उत्तराखण्ड का परिवेश आदि।

आज की हिन्दी साहित्य की मुख्यधारा की युवा लेखिकाओं में मनीषा कुलश्रेष्ठ, वन्दना राग, अल्पना मिश्र, शिल्पी, कविता, राजुला शाह, नीलाक्षी सिंह, शर्मिता बोहरा जालान आदि कुछ नाम हैं, जो आधुनिक हिन्दी जगत में अपना स्थान बना चुकी हैं। इन सभी रचनाकारों के सरोकार आज के हलचल और विषमताओं से भरे समाज की विविध समस्यायें हैं। बाजारवाद ने जिस तरह सारी सभ्यता, संस्कृति और समाज को दुष्प्रभावित किया है, उसमें युवा रचनाकारों की अंर्तदृष्टि नई तरह से उद्वेलित है। विखंडन मानो उत्तर आधुनिकता की पहचान ही बन गया है। आज की युवा पीढ़ी इसी वातावरण में पली -बढ़ी है। शिक्षा-दीक्षा, कैरियर, रोजगार, परम्पराओं और मान्यताओं की प्रासंगिकता को चुनौती, स्त्री-पुरुष की नये सिरे से पड़ताल और परिभाषा.आदि युवा महिला रचनाकारों के सरोकार बन रहे हैं। इनके अनुभव केवल महिला समाज की स्थिति तक सीमित नहीं रह गये हैं। वे अपनी मुक्ति को पूरे समाज से जोड़ती हैं। जीवन के विविध रूप और नये क्षेत्र इनकी रचनाओं के क्षेत्र बन रहे हैं।

परिवर्तन नई जटिलतायें लाता है तो नयी आशायें, सपने और दृष्टि भी लेकर आता है। महिला रचनाकारों के लिये आने वाला समय नई चुनौतियों के साथ नये विस्तार भी लेकर आयेगा, ऐसी आशा की जानी चाहिये।

❑❑

उत्तराखण्ड के परिदृश्य में महिला साहित्यकार : एक अवलोकन

❑ डॉ॰ बंसती मठपाल

भारतीय संस्कृति के मेरुदण्ड वैदिक साहित्य में अनेक महिलाओं का उल्लेख है। वैदिक स्त्री पुरुष के समान ही शिक्षित थी, ज्ञानार्जन करती, यक्ष-हवन भी करती व यज्ञोपवीत भी करती थी। मंत्रदृष्टा ऋषियों के समान ही वह मंत्रदृष्टा ऋषिका थी। उन्होंने अनेक मंत्रों का साक्षात्कार किया था। जीवन के सभी महत्वपूर्ण फैसले लेने में वह सक्षम थी। वह पुरुषों को चुनौती देती, पुरुषों की चुनौती स्वीकारती, उनसे शास्त्रार्थ करती और उन्हें पराजित करती। याज्ञवल्क्य की पत्नी गार्गी, मंड़न मिश्र की पत्नी भारती और आचार्य राजराजेश्वर की पत्नी आदि अत्यन्त विदूषियाँ व साहित्य मर्मज्ञ महिलाएँ थी। भारत ही नहीं विश्व में भी महान विभूतियों के व्यक्तित्व को संस्कार व परिष्कार देने वाली महिलायें ही रही हैं। एक माँ के रूप में सिकन्दर, प्लेटो, सुकरात, चन्द्रगुप्त मौर्य, छत्रपति शिवाजी, अब्राहिम लिंकन, जॉर्ज वाशिंगटन, कैनेडी, विवेकानन्द को विश्व वंदित व्यक्तित्व देने का कार्य नारी ने ही किया है। नारी उत्पादिका भी है और प्रतिपालिका भी, वह प्रकृति भी है और शक्ति भी। वह मानव संस्कृति का उत्स है। मानव जाति के जन्म, विकास व उत्कर्ष यात्रा की आधारभूमि नारी ही है।

समय के साथ-साथ नारी की स्थिति में उल्लेखनीय बदलाव आया है। नारी आज नयी-नयी भूमिकाओं में नजर आ रही है। आज की इस स्थिति को प्राचीन स्थिति से बेहतर तो नहीं कहा जा सकता है। वह इसलिये कि उन्नति व विश्वास के तमाम दावों के बीच भी स्त्री आज पिस रही है। विकास की इस दौड़ को वह जितना जीतने का प्रयास करती है वह कहीं दो कदम और पिछड़ा महसूस करती है। यही कारण है कि अपने प्रति विकृत मानसिकता के विरोध में उसे आज "स्लट वॉक" करना पड़ रहा है। यहाँ मैं बारहवीं सदी की कवयित्री 'अक्का महादेवी' का उल्लेख करना चाहती हूँ जिन्होंने अपने पति व राजा के विरुद्ध आक्रोश की अभिव्यक्ति के लिये अपने वस्त्र उतार फेंके थे। यह एकांगी मर्यादाओं व केवल स्त्री के लिये निर्मित नियमों के लिए तीखा विरोध था। यह स्थितियाँ तब आती हैं जब जीवन अत्यधिक दबाव व बंधनों से बोझिल हो जाता है। आज स्त्री ऐसी ही विषम

स्थितियों का सामना कर रही है। उसकी सहनशीलता पराकाष्ठा को पार कर चली है। अब नारी चेतना विद्रोह में और विद्रोह साहित्य में परिवर्तित हो रहा है। तसलीमा नसरीन का साहित्य इसका एक उदाहरण है।

उत्तराखण्ड एक भिन्न भौगोलिक स्थितियों वाला क्षेत्र है। यहाँ की विषम परिस्थितियों ने यहाँ के जनजीवन को बहुत प्रभावित किया है। पुरुषों को पारिवारिक दायित्वों का निर्वहन करने बाहर जाना पड़ा। शिक्षा व नौकरी दोनों कारणों से अर्थतंत्र पर उसका अधिकार हो गया और मुखिया होने के कारण उसने अपनी स्थिति को मजबूत कर लिया, स्त्री की पकड़ शनैः-शनैः कमजोर पड़ती गई। वह शिक्षा से वंचित होती गयी और फलतः कमजोर होती गयी। अतः शिक्षा ही वो माध्यम है जिससे महिलाओं को उनकी गरिमा तथा उनमें छिपी शक्तियों से परिचित कराया जा सकता है। उनकी ऊर्जा को देश के, समाज के निर्माण में लगाया जा सकता है। तमाम दावों व आँकड़ों के बाद भी स्त्री-शिक्षा के स्तर पर बहुत कार्य किया जाना शेष है। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात भी स्थितियाँ उतनी अनुकूल नहीं बन पाई हैं। उत्तराखण्ड विशुद्ध भारतीय संस्कृति का शीर्षस्थ केन्द्र है। यहाँ गढ़वाली, कुमाऊँनी, जौनसारी आदि भाषाएँ बोली जाती हैं। राष्ट्रभाषा हिन्दी का साहित्य लोकभाषाओं का ही साहित्य है क्योंकि भाषाओं, संस्कृत, प्राकृत व अपभ्रंश ने हिन्दी के शब्दकोश को समृद्ध किया है। गढ़वाली का संस्कृत, प्राकृत व अपभ्रंश से गहरा सम्बन्ध है। वैदिक संस्कृति से जो स्वर समय के साथ-साथ लुप्त हो गए थे वे गढ़वाली में मूल रूप से सुरक्षित हैं। उत्तराखण्ड की वीर माताओं, वीर पुत्रियों व बहनों ने जिन लोक गीतों की रचना की है वह हिन्दी साहित्य की स्वर्णिम निधि हैं। इन गीतों में शैल पुत्रियों का जीवन अत्यन्त सजीवता व मार्मिकता के साथ उभर कर आया है। उनके दुख-सुख, उत्साह, उदासी, वेदना, विषाद, कौतुक-कलख, संयोग-वियोग, साहस, बलिदान, क्षमा व संघर्ष की गौरव गाथाओं से यह साहित्य अत्यन्त सम्पन्न बना हुआ है। मैं यह उल्लेख इसलिये कर रही हूँ कि यदि भौगोलिक परिस्तिथियाँ विषम व प्रतिकूल ना होतीं, आर्थिक, सामाजिक व शैक्षिक वातावरण नारी के अनुकूल होता तो इन लोक गीतों के स्थान पर इन सरल प्राण महिलाओं के मन-मानस से "महाकाव्यों" की समृद्ध परम्परा का जन्म होता, यह मेरा दावा है। यहाँ इतनी प्रतिभा विद्यमान है जो शिक्षा का संस्कार ना मिलने से लोकधारा में परिवर्तित हो गई। स्वतंत्रता के बाद शिक्षा का जो थोड़ा बहुत प्रकाश इन पहाड़ों पर पहुँचा है उसके परिणामस्वरुप उत्तराखण्ड की क्षेत्रीय बोलियों में कुछ महिलाएँ अच्छा लिख रही हैं।

प्रदेश के सांस्कृतिक विकास, निर्माण व विकास में महिलाओं की उल्लेखनीय भूमिका रही है। उन्होंने लोकगीत, लोकनृत्य व अन्य पारम्परिक लोककलाओं को जीवित रखा है। उत्तराखण्ड का सांस्कृतिक संरक्षण व संवर्धन महिलाओं द्वारा ही होता आया है। वृक्षारोपण व वन संरक्षण जैसे संवेदनशील मुद्दों पर मैती व चिपको जैसे विश्वप्रसिद्ध आन्दोलन इन्हीं महिलाओं ने खड़े किये हैं। मैती, चिपको, मद्यनिषेध व राज्य निर्माण के आन्दोलनों में सक्रिय महिलाओं ने कितनी ही गीत पंक्तियाँ, जनगीत व नारे दुनिया को दिये। आन्दोलन की आत्मा व संवेदना को वह लोक गीतों में प्रकट करती रहीं और लोक साहित्य को अनगिणत गीतों का उपहार देती रहीं, किन्तु शिष्ट साहित्य में उसकी उपस्थिति बहुत कम नजर आयी क्योंकि उसके लिए पठन-पाठन, शिक्षण-प्रशिक्षण की समुचित व्यवस्था नहीं थी। अत: उसकी अभिव्यक्ति को जिस स्तर तक जाना चाहिए था, वह नहीं जा सकी। कुछ संभ्रांत घरों की लड़कियाँ शिक्षित हुईं, तो उन्होंने अपने-अपने क्षेत्र में नाम रोशन किया।

जब मैं दिये गये विषय पर लिखने के लिए सामग्री जुटा रही थी, तब मैंने कई पुस्तकें टटोलीं आश्चर्य! उत्तराखण्ड से संबंधित जितनी भी स्तरीय, विश्वसनीय, प्रामाणिक व शोधपरक सामग्री प्रकाशित है उनमें स्वतंत्रता आन्दोलन, समाज सुधार, शिक्षा प्रचार, मद्यनिषेध, वृक्ष बचाओ, चिपको, मैती व स्वतंत्र राज्य निर्माण की गौरवगाथाएं प्रचुर मात्रा में विद्यमान हैं। इसको सफल बनाने वाली महिलाओं की एक सशक्त श्रृंखला यहाँ विद्यमान है। परन्तु महिला साहित्यकारों में केवल एक महिला का उल्लेख कैप्टन शूरसिंह पँवार ने अपने एक लेख में किया है और वह नाम है श्रीमती विद्यावती डोभाल, उनकी किसी भी रचना का उल्लेख वहाँ नहीं मिलता।

स्वतंत्रता से पूर्व राष्ट्रप्रेम, समाज सुधार व जन जागरण के क्षेत्र में सक्रिय महिलाओं ने अपने-अपने कार्यक्षेत्र की समस्याओं को लिखित रूप दिया। अनेक महिला सभाओं व महिला मंडलों में प्रखर महिला सदस्य सामाजिक कुरीतियों पर प्रेरक लेख लिखा करती थीं। तत्कालीन 'युगवाणी' पत्रिका में 'दीदी' नाम से एक महिला अत्यन्त तीखे व धारदार लेखों द्वारा सांमती मनोवृतियों व रूढ़ियों पर तीखे प्रहार करती थी। श्रीमती चन्द्रावती पँवार का नाम भी तत्कालीन प्रखर लेखिकाओं में लिया जाता है। सन् 1948 में अनेक चुनौतियों व तीखी आलोचनाओं के बाद भी महिलामंडल ने 'कुणाल का क्षमादान' नाटक का मंचन करके रूढ़िवादी मानसिकता के मुँह पर करारा तमाचा मारा। विभिन्न क्षेत्रों में सक्रिय यह साहसी व जुझारु महिलाएँ यथा- रामेश्वरी सजवाण, कमला, बसंती देवी, तारा प्रकाश,

उर्मिला भट्ट, विमला बहुगुणा, मंगला देवी जुयाल, कुंती देवी वर्मा, तुलसी देवी, विशनी देवी शाह, जीवंती ठकुरानी व रेवती उनियाल आदि ने अपनी रचनात्मक उपस्थिति दर्ज करायी है। महान शहीद श्रीदेव सुमन की माता तारा देवी व पत्नी विजयलक्ष्मी सुमन के नेतृत्व व योगदान को भुलाया नहीं जा सकता।

विजयलक्ष्मी सुमन ने अपने क्षेत्र के लोगों की भावनाओं को स्वर दिया और सभा, समितियों व विधानसभा में जनभावनाओं को सशक्त ढंग से उठाकर अपने पति के अधूरे कार्यों को पूरा किया। वे दलित शोषित स्त्री मानसिकता को वीरांगना 'तीलू रौतेली' का प्रसंग कहकर प्रेरित करती रहीं। उत्तराखण्ड की जुझारू, अभावग्रस्त, अशिक्षित व अल्प शिक्षित नारी का मन मस्तिष्क अत्यन्त प्रगतिशील व आजादी विचार संपदा से सम्पन्न है। इन महिलाओं की मौन संवेदनाओं को स्वर देने का कार्य डॉ॰ वंदना शिवा ने किया। वे पर्यावरण संरक्षण व नारी स्वतंत्रता को परस्पर पूरक मानती रही हैं। उन्होंने उत्तराखण्डी महिला स्वरों को राष्ट्रीय व अर्न्तराष्ट्रीय मंचों की आवाज बनाने में सफलता पायी है।

स्वतंतत्रा प्राप्ति के बाद उत्तराखण्ड की गौरापंत 'शिवानी' का नाम हिन्दी की शीर्षस्थ महिलाओं में आता है। इन्होंने अनेक कहानियाँ, उपन्यास व लघु उपन्यास देकर हिन्दी साहित्य जगत को एक नयी दिशा व आयाम प्रदान किया है। उन्हें अनेक पुरस्कारों से सम्मानित किया गया है। शिवानी के साहित्य में कूर्मांचल का नैसर्गिक, उदार व सुसंस्कृत जीवन झलकता है। उनके पात्र राजदरबारों में हों, परदेश में हों या विदेश में, उनके कुमाऊँनी विचार कभी छूटते नहीं हैं। उन्होंने कुमाऊँनी समाज व संस्कारों का यथार्थ चित्रण किया है। सभ्यता व संस्कृति की चकाचौंध में अंधविश्वास व रुढ़िवादिता का जो कृष्णपक्ष अब तक लोगों को नजर नही आया था वह शिवानी के रचना संसार में स्पष्ट दृष्टिगोचर हुआ। उन्होंने अत्यन्त साहस के साथ अप्रासंगिक कर्मकांड पद्धति तथा अभिशप्त बाल–वैभव के अत्यन्त मार्मिक चित्र खींचे हैं जो सोचने पर विवश कर देते हैं कि क्यों नारी के साथ ये अन्याय हो रहा है? क्यों नारी के भाग्य में त्याग, तपस्या, उपेक्षा, तिरस्कार, अभाव, वेदना, घुटन लिख दिये गये हैं। इतने ऊँचे गगनचुम्बी पर्वतों पर बसने वाले समाज का हृदय नारी के लिए इतना क्षुद्र क्यों बन जाता है?

शिवानी जी के पश्चात महिला रचनाकारों की एक क्षीण परम्परा सुदीर्घ व सुदृढ़ होने लगती है। सामने आते हैं कुछ नाम – डॉ॰ शशिप्रभा शास्त्री, श्रीमती ललिता वैष्णव चंदोला, श्रीमती वीणापाणी जोशी व श्रीमती पुष्पा मानस आदि। डॉ॰ शशिप्रभा शास्त्री ने स्थानीय

महादेवी स्नात्तकोत्तर महाविद्यालय में अध्यापन करते हुए बहुत साहित्य सृजन किया। उनकी अनेक उत्कृष्ट कहानियों ने कहानी विधा के कोष की श्री वृद्धि की है। श्रीमती ललिता वैष्णव चंदोला ने अपने स्वनाम धन्य पिता पं॰ विश्वम्भर दत्त चंदोला की साहित्यिक विरासत के संरक्षण व संयोजन में स्वयं को पूर्णतः समर्पित कर दिया। श्रीमती वीणा पाणी जोशी हिन्दी व गढ़वाली दोनों में काव्य लेखन कर रही है। आपका गढ़वाली काव्य संग्रह 'पिठै पैरालो बुराँस' प्रकाश में आया है। साथ ही अन्य विचारपरक व शोधपरक लेख भी पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हुए हैं। आप उत्तराखण्ड साहित्य संस्कृति परिषद की पूर्व सदस्या भी रही हैं। श्रीमती पुष्पा मानस शिक्षा विभाग में निदेशक रही हैं, साथ ही साहित्यिक गतिविधियों में भी सक्रिय रही हैं।

इस समय की महिला लेखिकाओं में सर्वाधिक चर्चित नाम है कुसुम भट्ट का, जो एक सशक्त कहानीकार हैं। देश की सभी प्रतिष्ठित पत्र-पत्रिकाओं में उनकी कहानियाँ छप रही है। कुसुम जी निर्भीक व मुक्त विचारधारा वाली लेखिका हैं और उनके व्यक्तित्व की छाप उनके कृतित्व पर स्पष्ट दिखती है। वर्तमान में पत्र-पत्रिकाओं में डॉ॰ कुसुम डोभाल के शोधपरक लेख भी बहुत पढ़ने को मिलते हैं। आपने हिन्दी के बाल्यकाव्य में प्रतीक योजना व कल्पनातत्व विषय पर महत्वपूर्ण कार्य किया है। देहरादून की युवा कथाकारों में अल्पना मिश्र का नाम भी उल्लेखनीय है। अत्यन्त प्रासंगिक व समसामयिक कथालेखन रहा है अल्पना जी का।

उत्तराखण्ड का एक और उल्लेखनीय नाम है डॉ॰ हेमा उनियाल। हेमा जी लेखन, गायन व वृत्तचित्र निर्माण में सक्रिय हैं। पत्र-पत्रिकाओं में आपके लेख, कविताएं छपती रहती हैं। 'जोहार के शोका' कुमाऊँ की लोककला संस्कृति पर आपके चलचित्र चर्चित रहे हैं। आपने उत्तराखण्ड के मंदिरों पर अत्यन्त श्रमसाध्य शोध कार्य किया है जो अब दो पुस्तकों में प्रकाशित हो चुका है। डॉ॰ आशा रावत, चमेली जुगरान, आशा जुगरान, दिवा भट्ट, दीपा पांडे, बसंती पाठक, डॉ॰ सुधा रानी पांडे, उमा भट्ट, सुलोचना परमार, मधु मैखुरी, रीता खनका, डॉ॰ गिरिबाला जुयाल, गुरुप्रीत कौर थपलियाल, मीनाक्षी थपलियाल, किरन पँवार, कृष्णा खुराना, मीरा ध्यानी रतूड़ी, नीलम प्रभा वर्मा, आरुषि पोखरियाल, कुसुमकांता पोखरियाल, आशा भट्ट, कमलेश्वरी मिश्रा, सृजना राणा, जयंती सिजवाली, सावित्री काला 'सवि', डॉ॰ सविता रावत, भगवती गुप्ता, पुष्पा पंत, नीता कुकरेती, डॉ॰ सविता मोहन, रंजना शर्मा, हेमलता बहन, भारती पांडे, बीना बैंजवाल, उमा जोशी आदि

अपनी सजग व सशक्त लेखनी से निरंतर सृजन कर साहित्य के कलेवर को परिपूर्णता प्रदान कर रही हैं। इन सब का रचना संसार व कल्पना संसार यही उत्तराखण्ड है, इसकी पावन धरा है।

हिन्दी पत्रकारिता में उमा पाठक व संपति नेगी का नाम उल्लेखनीय है। डॉ॰ अल्का पाठक का नाम एक महत्वपूर्ण नाम है। आप साहित्यकार व आकाशवाणी की उपमहानिदेशक हैं। अब तक चौदह कहानी संग्रह, दो उपन्यास, दो व्यंग्य संग्रह, दस बाल कहानी संग्रह कुल तैंतालीस पुस्तकें आपकी प्रकाशित हो चुकी हैं। कुमाऊँनी गद्य में कमला वर्मा, प्रभा पंत तथा लोक कथा संग्रह में जयंती देवी का नाम उल्लेखनीय है।

अंत में कहना चाहूँगी कि समयावधि या कालखंड कोई भी रहा हो, हर युग साहित्यकारों के कंठ से बोलता है। कवि के कंठ से राग अलापता है, कहानियों में व्यथा-कथा कहता है और व्यंग्य में चुटकियाँ लेता व ठिठोली करता है। मेरे उत्तराखण्ड ने भी देश व दुनिया के सुर में सुर मिलाया है, आग में आग व राग में राग का योगदान दिया है। इस योगदान से उत्तराखण्डी महिला शक्ति की भूमिका अत्यन्त सबल व प्रभावशाली रही है। चाहे वह विशुद्ध साहित्य हो, पत्रकारिता हो या नैसर्गिक ग्राम्य गीत हो सब में उत्तराखण्डी स्त्री का संवेदनशील हृदय, कल्पना की समाहार शक्ति व मस्तिष्क की प्रखर मेधा का चमत्कृत रूप ही दृष्टिगत होता है।

❑❑

भाषा और शैली: परम्परा बनाम परिवर्तन

❑ भारती पाण्डे

भाषा का जन्म कब और कैसे हुआ कोई निश्चित समय इतिहास में उपलब्ध नहीं है। हाँ, मानव के जन्म के साथ उसके भाष-हाव-भाव से बनी होगी भाषा, ऐसी अवधारणा मान्य है। विद्वानों ने संस्कृत के भाष से भाषा की उत्पत्ति माना है। सामान्य तौर पर भाषा शब्द का प्रयोग अनेकार्थ रूप में किया जाता है। प्रकृति में तमाम प्राणियों की भाषा, पशु-पक्षियों की भाषा, राज-काज और कानून, साहित्य और लोक तथा महानगरीय भाषा, विज्ञापन एवं प्रसारण चैनल्स की भाषा- इन सबकी भाष, प्रस्तुति का शिल्प जिस भंगिमा, आचरण, संस्कृति के साथ किया जाता है, शैली कहलाती है। एक बात और जोड़ना चाहूँगी जो भाषित सौन्दर्य आकर्षित करती है उसे शैली कहा जाता है। विद्वानों का अभिमत भी मेरे उपरोक्त कथन के समीप ही है। 'शील+अच+ष्यञ+ङीप (या लोप) या शील+अण+ङीष् से बना शैली का अर्थ अभिव्यक्ति का तरीका साहित्य, संस्कृति, सभ्यता में शैली कहलाता है।'

हम कुमाऊँनी भाषा पर चर्चा करेंगे। लोक भाषा और लोक साहित्य में अधिक अन्तर नहीं है क्योंकि भाषा शब्द ही व्यक्त वाणी की वाचक भाष धातु में अङ एवं टाप प्रत्यय जुड़कर बना है। जिसके मायने हुए अभिव्यक्ति के लिये प्रयोग में आने वाली उच्चारित ध्वनि संकेत भाषा कहलाती है और जब ये ध्वनि संकेत भंगिमाओं के साथ मिलकर संस्कृति व साहित्य सर्जना तथा समाज में प्रयुक्त होते हैं तब शैली का स्वरूप सुनिश्चित होता है। आम कुमाऊँनी बातचीत में प्रयुक्त मुहावरों का चलन, साहित्य तथा समाज की परिस्थितियों में व्यंगात्मक शैली की समयानुकूल प्रस्तुति के अनेक उदाहरण प्राप्त हैं। जहाँ तक मेरा अध्ययन है कुमाऊँनी भाषा का सौन्दर्य यहाँ बात-बात पर मुहावरों का प्रयोग एवं लोकोक्ति अथवा कहावतें हैं। आज भी ग्राम्य क्षेत्रों में अपनी बात स्पष्ट करने के लिये कहावत, मुहावरों का बखूबी प्रयोग किया जाता है। कुछ उदाहरण है 'कन्यै कोढ़।' अर्थात्-स्वयं विपत्ति बुलाना।

'पराय च्याल् पावण छार् चालण।'

अर्थात्- दूसरे की सन्तान पालना जोखिम भरा काम है।

ये उदाहरण आम लोक की भाषा के हैं और आज भी अमूमन प्रचलन में हैं। पूर्व में यदि सात-आठ सौ वर्षों का इतिहास टटोलें तो पायेंगे कि कुमाऊँनी का स्वतंत्र स्थापित स्वरूप प्राप्त नहीं लेकिन भारतीय भाषाओं के साथ-साथ कुमाऊँनी भाषा के सर्वेक्षक जार्ज ग्रियर्सन ने Linguistics Survey of India में कुमाऊँनी भाषा को पुरानी खस बोली को मिटाकर विकसित हुई राजस्थानी से नि:सृत माना। प्रो॰ के॰ डी॰ रूवाली ने आग्नेय, दरद से प्रभावित एवं शौरसेनी अपभ्रंश से विकसित मानकर प्राकृत से प्रभावित माना। तमाम अभिमतों के बावजूद कुमाऊँनी संस्कृत से नि:सृत है, मान लेना ही उचित है क्योंकि सभी भारतीय भाषाओं का मूल संस्कृत है।

'कुमाऊँ का इतिहास' नामक ग्रन्थ में उल्लेख है कि कत्यूरी शासन काल में ताम्रपत्रों एवं शिलालेखों तथा राजाज्ञा व राज काज की भाषा संस्कृत थी। किन्तु सामान्य जन के भाषा स्वरूप का प्रमाण नहीं मिलता। कालान्तर में चन्दवंशीय शासन काल में कुमाऊँनी राजभाषा थी। तब के साक्ष्य स्पष्ट करते हैं कि संस्कृत के तद्भव की प्रचुरता के बावजूद विशुद्ध संस्कृत शब्दों का प्रचलन था। सन् 1389 में राजा ज्ञानचन्द के दान पत्र का उल्लेख "ओऽम् स्वस्ति श्री शाके 1311 समये च कार्तिक वदि चर्तुदस्याम् तिथौ गुरू वासरे शिवरात्रौ राज श्री ग्यानचन्द्रेण गर्सू शर्मणे ब्राम्हणाय भूमि संकल्प दीन्हीं" तथा 1755 में राजा दीपचन्द के दानपत्र "महाराजाधिराज श्री राज दीपचन्द देवज्यू ताम्रपत्र करि शिवदेव जोइसी माल परभत जागीर बगसी बारमंडल स्यूनरा का गर्खा में बिशी गंगोला कोटुली थात बगसी मुड़िया का परगने में मौजा देहरी डुली बगसी, इन गाउन लगतो गाड़, घट, लेक, इजर, धुरा डंडा सुद्धा पायो। रोहिला लै माल टिपि लिछी, हमरा घर का मानस रोहिला मिलि रछ्या...." का उल्लेख है। पुरातात्विक सामग्री के एक अध्ययन से ज्ञात होता है कि ईसा की द्वितीय शताब्दी तक कुमाऊँ की राजभाषा पाली थी। तत्पश्चात तीसरी शताब्दी के शील वर्मन के जगतग्राम से प्राप्त इष्टिका लेख ब्रह्मी लिपि एवं संस्कृत भाषा में मिले हैं। शताब्दियों से संस्कृत से नि:सृत पोषित और वय हुई कुमाऊँनी भाषा जब मुखर हुई तो संस्कृत का प्रतिबिम्ब पड़ना स्वाभाविक है। चार-पाँच सौ साल पहले की कुमाऊँनी रचना का दर्शन कराते प्रथम कवि गुमानी पंत ने भी संस्कृत के इन्द्रव्रजा, शार्दूलविक्रीड़ित, त्रोटक, शिखरनी आदि छन्द का प्रयोग किया है। यह सिद्ध करता है कि तब संस्कृत भाषा के शब्द और शैली का कुमाऊँनी भाषा पर प्रचुर प्रभाव था। गुमानी की रचनाओं से ज्ञात होता है कि मुहावरेदार एवं लोकोक्ति जो कि संस्कृत के सूक्त प्रधान शैलियाँ हैं, कुमाऊँनी में भी साधिकार प्रचलन में आ चुकी थीं। कुछ उदाहरण-

1. यो ब्रह्माण्ड चड़ि उठी कमर का द्वि टुक टुटि पड़ा
आँखन में अति डाह यो बखत मेरि खोज खबर को करो
ओ ईजा बबज्यू कका सुन सबै मिश्री खाणूस दियो
ळयावो दूद सिता वि प्राण उड़नें हा राम मैं मर (शार्दुलविक्रीड़ित)

अर्थात्: ब्रह्माण्ड में जो चढ़ा उसके कमर के दोने छोर टूट गए, आँखों में ईर्ष्या है अत: मेरी खोज खबर कौन करायेगा। हे माँ! हे बाबा! चाचा सुनो सभी मिश्री खाने को दो। दूध लाओ, सुलाओ मेरे प्राण उड़ रहे हैं, हे राम, मैं मरा।

2. हिसालु की जाति बड़ी रिसाल, नजीक जै बेर घघोड़ी खाँछ
यो बात को नक नै माणों, दुध्यालक लात सौंणैं पड़न छौ।
(चौथेपद में मुहावरा प्रयोग)

अर्थात्: हिसालु (जंगली फल) रसीला फल जिसके समीप जाकर मैं बेसब्री से तो खाता हूँ पर उसकी झाड़ी चुभती है। इस बात का बुरा नहीं लगता क्योंकि दुधारू गाय की लात सहनी पड़ती है।

स्वतंत्रता के पूर्व की रचनाओं में छन्दबद्ध रचनाएं अधिक थीं। पश्चात बीसवीं शताब्दी में रचनाओं के क्षेत्र में विविध प्रयोग हुए। तद्भव शब्दों की बहुलता तथा क्षेत्रीय शब्द उच्चारण के प्रयोग, भाषा में ध्वन्यात्मकता एवं शब्दों के द्वित्व प्रयोग के साथ लक्ष्यार्थ बोधक प्रयोग, लाक्षणिक प्रयोग हुए।

कुछ तद्भव शब्द इस प्रकार हैं- रसै, सतरंगी, इन्द्रैणि, दरिद्र, रित।

क्षेत्रीय उच्चारण- तत्सम सहित ठेठ कुमाऊँनी शब्द हैं भान्, आल्, तिरसूळ, लाम जैबेर इत्यादि।

ध्वन्यात्मकता के उदाहरण हैं- किकाट, घौघाट, तौड़ात, मौणाट, चिचाट इत्यादि।

द्वित्व प्रयोग के उदाहरण हैं- अगड़ पिछाड़, पेला पेल, काळ संवाळ, ठाठ बाट, सौव कठौव इत्यादि।

लाक्षणिक बोध- क्वठक शूल, पू-पाक, ख्वार फुट, निखाण हैगे।

अब हम शैली की चर्चा करेंगे। पूर्व में परिभाषित किया है अभिव्यक्ति की विशिष्ट भंगिमा शैली कहलाती है। कुमाऊँनी रचनाकारों में गुमानी पंत से लेकर शेरदा अनपढ़ तक ने मुहावरे तथा लोकाक्ति प्रधान शैली के साथ-साथ सुकुमार शैली और विदग्ध शैली में भी रचनायें दीं हैं। **सुकुमार शैली** के अन्तर्गत क्रमशः वर्णनात्मक शैली, चित्रात्मक शैली, भावात्मक शैली, गेयात्मक शैली तथा **विदग्ध शैली में**- हास्य-व्यंग्य प्रधान, प्रतीक-रूपक प्रधान, मुहावरा लोकाक्ति प्रधान शैली प्रधान हैं।

अमूमन सभी शैलियों में रचनाकारों ने रचनाएं लिखीं। सुकुमार शैली के अन्तर्गत भावात्मक शैली का एक उदाहरण देखिये-

"सार गौंकी चेळि बेटि सब आला मैत,
पुलाठिपि घर घर खेलला तौ चैत।"

हियू भरि आलो बाज्यू फिकर लै बड़ी, आँखों मैं लै जाली जब सावन की झड़ी।
शोक दु:ख नको हुँछ पैठी जाँछ मुड़ी, उदास हैरो छ मन नको भलो सुणि।
कसि वा भुलला तुम चेहड़ी का आगो, तार जसो लागि रौलो कानों जसो धागो।
म्यर शोक झन करिया भलि चेलि हयो, विधवा हयी बटि बेऽरे मरि गयूँ।

(वैधव्य पीड़ा से प्राण त्यागने वाली बेटी स्वप्न में पिता से कहती है कि सारे गाँव की बेटियाँ मायके आयेंगी तो उन्हें देखकर मेरी याद में आपका हृदय भर आयेगा)

विदग्ध शैली के अन्तर्गत हास्य व्यंग, प्रतीक-रूपक प्रधान शैली में अभिव्यक्ति को धारदार बनाया, तो कहीं लोकोक्ति-मुहावरों के साथ रचनानुभूति को प्रस्तुत किया।

शेरदा अनपढ़ की व्यंग्य प्रधान रचना देखिये-

1. दीदी सौर जै कि भै, ज्यूनै खबीस भै और पुर चारसौ बीस भै।
   जनम भरि साँच कूणैं में रै गई, मैं हूँ नथ बणूणें रैं गयीं।

अर्थात्: दीदी का ससुर यानि सम्मानित व्यक्ति जीवित खबीस ही नहीं है, चार सौ बीस भी है यानि बहुत चालाक। आजीवन झूठ कहते रहे, वादा खिलाफी की हद है, मुझसे नथ बनाने का वादा किया लेकिन नथ नहीं बनाई (स्वार्थ की पराकाष्ठा)।

2. तिरंग रंगी रौ, सौ रंग म, आज ढडु खानइ जाम पुँजी,
बन्ढाडु खानइ ब्याज, खानखाने फिरलै रगसि रई,
आज त्यार-म्यार हिस्स ददा लूण दगै प्याज।
ओ शेरदा ये छु राम राज। (कलयुगी राम राज पर व्यंग्य)

अर्थात्: तिरंगा कई रंगों में रंगा है अर्थात् आजादी के बाद कई तरह की अव्यवस्थायें जग जाहिर हैं, ढढु (बिलौटा) यानि अकर्मण्य लोग आज की व्यवस्था का लाभ उठा रहे हैं और ये कितना भी लूट लें फिर भी इनका मन नहीं भर रहा है। पगला से गये हैं त्यौहारों की रंगत धूमिल पड़ गयी है। शेरदा कहते हैं यही है अब राम राज्य।

गोपाल दत्त भट्ट की एक रचना में जनता के शोषण पर व्यंग्य किया गया है-

"कितौल जस सरकौणछ। भुकाक भ्योवन बरकणौछ।
फिरलै प्रजातंत्र जिन्दाबाद कौणै।
जबकि कच्यार मजि थूक जस ख्येड़ी रौ आदिम।
थोव छ पर बुलै नी सकन।"

अर्थात्: इन्सान की दुर्दशा का कारण अभिव्यक्ति की असर्मथता। यहाँ शोषकों द्वारा देश की जमा पूँजी ब्याज सहित हड़पे जाने तथा शोषितों के हिस्से नमक, प्याज के साथ रोटी भी कठिनाई से मिलती है, ऐसे राम राज्य पर व्यंग्य है।

आधुनिक रचनाकारों की रचनाओं में प्रतीक और रूपक का प्रयोग अधिक दिखाई दे रहा है। बालम जिनोटी का "किरमोइ तराण" मथुरादत्त मठपाल की "रटटैक गणपति ज्यूक दगड़।" गोपाल दत्त भट्ट की "जभत बुलाण जरूड़ी छी।" ऐसी ही रचनायें हैं। एक उदाहरण-

"जभत बुलाण जरूड़ी छी। उभत तु। लाट बणिबेर। जगाँव में जेबैर। सुट्टि बजौणेछिये। यों अन्यार थैं उज्याव कौंनी। यो उज्ज्याज धैं अन्यार कौनी। जो कूनि हम छाँ सूर्जाक च्याल। उनरै आँखन मजि पड़छ। सबौहैं पैलि मोतियाबिन्द।" (बड़बोलों के प्रति)

अर्थात्: जिस वक्त अपनी बात रखनी थी उस वक्त तू गूंगा बन गया और अब बड़बोले की भांति बोल रहा है। इस अन्धेरे को उजाला और उजाले को अंधेरा तथा स्वयं को सूर्य पुत्र बताने वाले की आँखों पर ही पर्दा पड़ा होता है। स्वार्थ में आकण्ठ डूबे नियन्ताओं के विरूद्ध

है। मौन धारण किये हुए, समय पर अपनी बात रखने में असमर्थ व्यक्तियों पर कटाक्ष अकर्मण्य तथा वस्तु स्थिति से बेखबर व्यक्ति का चरित्र उजागर करता है।

हाँलाकि मुहावरे और लोकोक्ति का प्रयोग आज के दौर में कम ही है। कवि लोकरत्न गुमानी ने एक परम्परा डाली थी कि रचनाओं के अंतिम चरण में लोकोक्ति अथवा मुहावरे का प्रयोग हो।

"रैवतकन्या प्राग्ग जनिता नु सा परिणीता सीरभृता नु
सो भवदस्याः स्वयमाजानु, 'ज्वे जै ठुल्ल खसम जै नानु।" (मुहावरा)

अर्थात्: पत्नी बड़ी और पति छोटा (असमान परिस्थिति)

इसी परम्परा में शेरदा अनपढ़ की मुहावरा लोकाक्ति प्रधान रचना द्रष्टव्य है-

"ज्याडबाज्यू बोलि जै के मारनी कमरे तोड़नी।
भाँटि खुजिगे, गाँठि खुजिगे, जाँठि टुटिगे
कै रैगो पालम जसि लागि, भिजि रै हो वीकैं छु मालुम।" (लोकोक्ति)

कुमाऊँनी कवियों ने व्यंजनात्मक शब्दों का चयन कर मुहावरेदार शैली में सर्जना की। कवि गौरी दत्त पाण्डे इस कला में सिद्धहस्त थे। कवि रत्न सुमित्रा नन्दन पंत ने लिखा है- "पहाड़ी भाषा का स्वर संगीत, उसके सरस प्रवाह, उसके मुहावरे तथा सूक्ष्म व्यंजनात्मक शब्दों पर जो सिद्धि गौर्दा को थी मुझे अन्यत्र देखने को नहीं मिली।" लुके छिपे प्रणय प्रसंगों को वे इस खूबी से उजागर करते थे कि कुछ भी बाकी नहीं रहता था। एक नमूना-

"जिवन्ती लली, कसिकै करली घरवार।
द्विय तेरा घर छिया, तिसर खड़क सिंह रजवाड़॥"

19 वीं शताब्दी में आजादी से पूर्व के माहौल में मिशन में अनेक अनाम गोत्र में जन्मी वैध तथा अवैध सन्तानें पलती थीं। अन्धविश्वास के कारण मूल नक्षत्र में पैदा हुई या नाजायज या विधवा की सन्तानों को मिशन में डाल दिया जाता था और वे ईसाई बनकर पलने लगते थे। इस संदर्भ में गौरी दत्त पाण्डे का व्यंग दृष्टव्य है-

हसुआ हैनरी जसुवा जैक। कैले नि जांणि च्याल भै कैक॥

अर्थात्: भूमण्डलीयकरण के दौर में भाषा व शैली की परम्परा में भी परिवर्तन स्पष्ट रूप में देखा गया है। जहाँ नये शब्द आये वहीं नयी शैली व विधाएं भी आयीं। जैसे- हायकू एकाक्षरी, असआर, गज़ल, छन्द मुक्त, नई कविता तुकान्त-अतुकान्त, छन्द युक्त, आदि। किसी भी भाषा परम्परा के साथ दूसरी भाषा के शब्द की संबद्धता परिवर्तन का आगाज देती है, जिससे उसके विकास और समृद्धि को बल मिलता है। ये परिवर्तन बाह्य शब्द को अपने उच्चारण में ढाल कर प्रस्तुत करने से सहज ही स्वीकार्य और प्रचारित होता है।

भावना प्रधान तथा सौन्दर्य प्रस्तुत करती रूप गाथा वर्णन शैली में अभिव्यक्ति निर्भीकता से लोकगीतों के माध्यम से उजागर करना परम्परा भी है। रूपगाथा की एक रचना-

"नाना नानी परूद छुम। गैंगरा मे की बूटी द रूम।
हुमा चना की चकोरी द रूम।
द्विमाणिया तौली। छाजा बति झन चैये।
हुमा तलि छुटि जालि द रूम।"

अर्थात्: गंगाराम की बहू की रूपगाथा है। वह छोटी सी बहू सुंदरी जब चलती है तो उसके पैरों के घुंघरू बजते हैं तो घुंघुरू धन्य हो जाते हैं। अरी परू! तू छज्जे में से मत झांक नीचे गिर जायेगी।

प्रकृति रूप वर्णन में छायावाद के पुजारी सुमित्रानन्दन पंत की रचना 'बुराँश' देखिये-

"सार जंगल में त्वे जक्वे न्हा रे क्वे न्हा,
फुलन छै कि बुरूँश जंगल जस जलि जाँ।
शल्ल छ, द्यार छ, पयो छ, अयाँर छ,
सबनौंक फाङन में पुङ नक भार छ।
पैं त्वै में दिलैकि आग, त्वै में ज्वानिक फाग छ,
रगन त्यार, ल्वे छ, प्यारक खुमार छ।"

अर्थात्: (प्रेम की पराकाष्ठा) सारे जंगल में तेरी जैसी कोई नहीं, जब बुरांश जंगल में खिलता है तो ऐसा प्रतीत होता है जैसे जंगल जल रहा है। साल, द्यार, पयो और अंयार के वृक्ष हैं। सभी की डालियाँ आच्छादित हैं। तुम्हारे हृदय में तो आग है, तुम्ही में युवा फागुन की रंगत है। तुम्हारे अंग अंग में, तुम्हारे रक्त में प्रेम का खुमार भरा हुआ है।

कुमाऊँनी लोक में आपसी संवाद में भी मुहावरे तथा कहावत प्रयोग होते हैं। बातचीत की शैली के रूप में यथा- 'अनहोनी के संदर्भ में 'अणल्येखी बाचण।' 'अखोड़ फोड़ि सबै चानी करम फोड़ि को चाँ।'

अर्थात्: बिना लिखे का वाचन। अखरोट फोड़ने पर सब देखते हैं लेकिन फूटे करम/भाग्य कोई नहीं देख पाता।

इसी प्रकार गन्ध महसूस कराने वाली शब्द शैली, शरीर की पीड़ा महसूस कराने की शब्दावलियाँ हैं इनकी संख्या 45 है। जैसे- सुनैन बास (गीली मिट्टी की गन्ध), चुरैन बास (मूत्र की बास), खौखेण (सड़ा अनाज), खौंसेण (जली मिर्च), ढौसेन (पेट के भीतर विकारी, गैस), बरबरौण (रौंगटे उठना) आदि।

अंत में परम्परा बनाम परिवर्तन के सम्बन्ध में कहना चाहूँगी कि परिस्थिति के अनुरूप भाषा व शैली में बदलाव स्वभाविक होता है। आजकल जो लिखा बांचा जा रहा है उसमें भूमण्डलीकरण का प्रभाव है। प्रसारण चैनल्स का प्रभाव है। अब संस्कृत के स्थान पर हिन्दी के शब्द प्रयोग कर अपनी अभिव्यक्ति को सरलता पूर्वक रचने का प्रयास हो रहा है। निश्चय ही भाषा और शैली को संभालने के यथा संभव प्रयास हैं लेकिन प्रतिष्ठित समालोचकों, विद्वानों और नव हस्ताक्षरों के मध्य तारतम्यता जरूरी है ताकि भाषा की अस्मिता, सम्प्रभुता को अक्षुण्ण बनाने में सामन्जस्य स्थापित हो।

❑❑

रचना धर्मिता की दिशा: वर्तमान परिप्रेक्ष्य में

❑ सावित्री काला

आज तक हम यही सुनते व पढ़ते आ रहे थे कि साहित्य समाज का दर्पण तो होता ही है, साथ ही यह समाज का दिग्दर्शक भी होता है। एक सच्चा साहित्यकार आर्थिक प्रलोभनों से ऊपर उठकर समाज की विसंगतियों का भी निर्भीक चित्रण करता है। उसकी रचना धर्मिता किसी धन कुबेर की दासी नहीं है लेकिन बीसवीं से इक्कीसवीं सदी में कदम रखते ही यह परिभाषा बदल गई, आज रचना धर्मिता स्वतन्त्र नहीं परतंत्र है, यह समाज के अनुसार हो रही है। जैसा समाज चाहता है, सोचता है वैसा ही साहित्य परोसा जा रहा है, चाहे वो कवि हो, कलाकार हो , लेखक हो या साहित्यकार हो अथवा हमारे समाज का चतुर्थ स्तम्भ पत्रकार हो। विडम्बना यह है कि अधिकांश पाठक वर्ग भी बड़े चाव से घटनाओं, सूचनाओं, कथा कहानियों को पढ़ता है जिनमें यथार्थ के स्थान पर नाटकीयता व सनसनी होती है।

पत्रकार भी वही परोसते हैं जो समाज के अधिक से अधिक पाठक चाहते हैं। सत्ताधारियों की चाटुकारिता ही उनका धर्म है क्योंकि अधिकतर पत्र-पत्रिकायें उन्हीं के द्वारा प्रकाशित होती हैं। इतिहास साक्षी है कि उत्तराखण्ड आन्दोलन में महिलाओं की भूमिका महत्वपूर्ण रही है लेकिन आन्दोलन के बाद बहुत सी महिलाओं को उचित सम्मान नहीं मिल पाया है। वे लाठी व गोली खाकर अपनी अस्मत लुटा कर भी न जाने समाज के किस कोने में पड़ी हैं। उन अछूती महिलाओं की वस्तुस्थिति तथा दशा को समाज के सम्मुख लाने व उजागर करने का कार्य क्या साहित्यकारों का या पत्रकारों का नही है? यद्यपि 'महिला समाख्या' जैसी सजग संस्थायें महत्वपूर्ण कार्य कर रही हैं। वे महिला गोलबन्दी की दिशा की ओर बढ़कर समाज की अंतिम महिला तक पहुँच कर उन्हें समाज में सम्मान पूर्वक जीविका कमाने में प्रयास कर रही हैं, लेकिन यह नगण्य है। रचना धर्मियों का कर्तव्य है कि ऐसी कहानियाँ, कवितायें व लेख लिखें जिससे समाज में जनजागृति हो सके, आम जन अपने अधिकारों को जान सके। आज कितने ही घरों में महिलाओं को सताया जा रहा है। शिक्षित महिलाएं लोक-लाज के कारण कितनी दयनीय स्थिति से जूझ रहीं हैं। वे घर परिवार को भी देखती हैं तथा बाहर का काम करके अर्थ भी अर्जित कर रहीं हैं। फिर भी उनके प्रति समाज उदारता की भावना नहीं रखता।

आज की रचना धर्मिता के अर्न्तगत वही सब कुछ लिखा व पढ़ा जा रहा है जो हमें पश्चिम की भोगवादी संस्कृति की ओर ले जाता है जिससे हमारा समाज विघटित हो रहा है। अपने ही प्रदेश में देख लीजिए। अधिकतर पत्र-पत्रिकाएँ सत्ताधारियों के द्वारा प्रकाशित किये जाते हैं जिनमें उनकी ही प्रशस्ति का गुणगान होता है। कहना गलत न होगा कि उत्तराखण्ड की रचना धर्मिता चाटुकारिता करने वालों तक ही सीमित रह गई है। रचना धर्मिता का एक सशक्त स्तम्भ पत्रकारिता है। यह वह स्तम्भ है जो समाज क्या पूरे ब्रह्माण्ड को भी हिला कर रख सकता है। यह समाज का चतुर्थ स्तम्भ कहलाता है। कार्यपालिका, न्यायपालिका तथा व्यवस्थापिका के बाद देश को चलाने में पत्रकारिता का महत्वपूर्ण स्थान है। रचना धर्मिता का यह माध्यम समाज को बदलने के लिए महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है। यह सर्वविदित है कि उत्तराखण्ड की रचना धर्मिता आजादी की लड़ाई के साथ ही प्रारम्भ हो गई थी। रचना धर्मिता का प्रयोग एक आन्दोलन के रूप में किया जा सकता है लेकिन आज के रचनाकार वही सब लिख रहे हैं जो पाठक पढ़ना व सुनना चाहते हैं अर्थात वास्तविकता से बहुत दूर। रचना धर्मिता की दिशा ही बदल गयी है। रचना धर्मिता केवल कहानियों, लेखों तथा कविताओं तक ही सीमित नहीं है, अपितु विश्व के साहित्य में रचना धर्मिता आस्था व विश्वास पर आधारित होती है। परन्तु कभी-कभी रचनाकार समाज को विपरीत दिशा की ओर भी मोड़ देते हैं।

वास्तव में देखा जाए तो रचना, तर्क की संगति व असंगति के बीच बड़ी विभाजक रेखा है। एक विवेकशील अन्तर्दृष्टि सम्पन्न रचनाकार ही उसे पहचान पाता है। उसके लेखन का समाज पर क्या प्रभाव पड़ेगा इसका विवेकपूर्ण ज्ञान उसे अवश्य होना चाहिए।

आज अनेक लेखकों व रचनाकारों की एक विश्वव्यापी प्रवृत्ति है जिसके चलते उन्होंने परस्पर आदान-प्रदान का एक ऐसा समुदाय बना लिया है जो धीरे-धीरे साहित्यिक बाजारवाद में बदल रहा है। हम यह भी जानते हैं कि बाजारवाद का आधार विज्ञापन और पत्रकारिता पर आधारित होता है जो समाज को किस ओर ले जा रहा है सभी जानते हैं लेकिन मानने में हिचकिचाहट अनुभव करते हैं। उनकी रचना धर्मिता का प्रभाव चारों ओर दिखाई दे रहा है। हम सब यह पढ़-सुन कर किस दिशा की ओर बढ़ रहे हैं यह सोचने का विषय है। एक ओर रचना धर्मिता में ऐसी उलझन तथा अस्पष्टता उत्पन्न की जा रही है जो अपनी बौद्धिक जटिलता का प्रभाव डालकर पाठक को अभिभूत करना चाहती है। ऐसी रैसिपी समाज में परोसी जा रही है जिसमें गरम मसाला, सॉस, क्रीम, दही, टमाटर सब कुछ पड़ा है। यह रैसिपी वर्षों पहले लिखी गई रचनाओं से एकदम अलग है, यद्यपि इसमें ज्ञान-विज्ञान, दर्शन,

इतिहास, राजनीति शास्त्र सभी बघारा जा रहा है। रचनाकार ऐसी रचना कर रहे हैं जो भानुमती के पिटारे जैसी है, उसका समाज में नकारात्मक प्रभाव ही पड़ रहा है। तर्कपूर्ण रचनाओं का तो सर्वथा अभाव ही दिख रहा है। रचना धर्मिता को तर्क की कसौटी पर कस कर ही समाज के सम्मुख परोसा जाना चाहिए अन्यथा अनर्गल रचनाओं को पढ़ कर समाज रसातल को ही चला जायेगा।

रचना धर्म समाज के विकास तथा प्रगति को ध्यान में रखते हुए किया जाना चाहिए। जो लेखक इस परम धर्म को निभाते हुए अपनी रचना करते हैं वे ही सफल रचनाकार माने जाते हैं। रचना धर्मिता ही वह सशक्त साधन है जिसके द्वारा समाज में फैली कुरीतियों व अंधविश्वासों को लेखनी की धार द्वारा दूर किया जा सकता है।

किसी भी रचना का तर्क भीतर से अंकुरित होता है, उसमें सामन्जस्य बिठाना होता है। बाहर या ऊपर से आरोपित करने पर यह सामन्जस्य नष्ट हो जाता है। यह उस फटे दूध की तरह हो जाता है जिसमें चाहे घंटों मथनी चलाते रहो "मथै ना माखन होय" जैसी परिस्थिति का सामना समाज को करना पड़ता है। इस तरह हम कह सकते हैं कि रचना धर्मिता का समाज पर प्रभाव तो पड़ता ही है जो समाज की दशा और दिशा निर्धारित करता है। रचना धर्मिता अर्न्तदृष्टि पर भी आधारित है। यदि कोई रचना समाज की दृष्टि से उपयोगी नहीं है तो उसे नकारना चाहिये तथा उसकी आलोचना अवश्य की जानी चाहिए क्योंकि रचना धर्मिता के तीखे तीर समाज पर अपना असर डालते हैं।

अतः मैं इतना कहना चाहूँगी कि आज की रचना धर्मिता में महिलाओं की समृद्धि व विकास की बात न करके उन्हें समाज में आकर्षण का केन्द्र बना दिया गया है। विज्ञापनों में भी अर्द्धनग्न चित्रों के द्वारा उन्हें समाज के सन्मुख परोसा जा रहा है। उसके लिए आवाज उठानी ही चाहिए। आज के टीवी चैनल इसके प्रमुख वितरक हैं। लोगों की मानसिकता में परिवर्तन लाना होगा, ऐसी रचनायें लिखी जायें कि लोग अपने मन, वचन एवं कर्म से पवित्र विचार रखें। महिलाओं के प्रति सम्मान व आदर की भावना यदि पनपेगी "यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवताः" से देवखण्ड विकास व प्रगति की ओर बढ़ सकेगा। रचना धर्मिता द्वारा ही हम समाज को सही दिशा दे सकते हैं। रचना धर्मिता का यह मूल मंत्र रचनाकारों को समझना चाहिये कि वे समाज को किस ओर ले जाना चाहते हैं विकास की ओर या विनाश की ओर ? इस ज्वलंत प्रश्न का निराकरण होना ही चाहिए।

❑❑

नरेन्द्र सिंह नेगी के गीतों में नारी का चित्रण

❑ रजनी कुकरेती

"उत्तराखण्ड की नारी और साहित्य" इस विषय की यदि इस दृष्टि से विवेचना की जाये कि उत्तराखण्ड के गीतकारों ने यहाँ की नारी का किस रूप में चित्रण किया है तो इन गीतकारों में सहज ही जिनका नाम सर्वप्रथम मानसपटल पर उभरता है वह है श्री नरेन्द्र सिंह नेगी का नाम जो अब उत्तराखण्ड के लोक गीतों का पर्याय बन चुका है।

कहते हैं यदि आपको पहाड़ और विशेषतया गढ़वाल को समझना है तो श्री नरेन्द्र सिंह नेगी के गीत सुनना और देखना काफी है। उनके कृतित्व में समूचा गढ़वाल एवं पहाड़ प्रतिबिम्बित होता है। यहाँ की स्त्री जितना खुद को समझती है उससे अधिक नेगीजी उसके मन की थाह लेने में सक्षम रहे हैं।

पहाड़ का जीवन भी पहाड़ की ही तरह दुरुह एवं कठिन है। ग्राम्य जीवन की दैनिक ईंधन, चारा एवं पानी की व्यवस्था करने में जुटी पहाड़ी महिला इतनी व्यस्त हैं कि समाज ने उसे घसेरी (घास लाने वाली) एवं पन्देरी (पानी लाने वाली) नाम दे दिये हैं।

पहाड़ी पुरुष के पास रोजगार हेतु परदेश जाने के अलावा कोई चारा नहीं है। ऐसे में घर-परिवार, बाल-बच्चों, खेती-बाड़ी एवं गाय-भैंस की सारी जिम्मेदारियाँ स्त्री के कंधे पर आ जाती हैं। उस कर्मशील स्त्री की गाथा गाते हुये नेगीजी कहते हैं

"बिसरी बिटी धाण्यूँ मा लगीन/सेणी-खाणी एग हवेनि
यूँका पसीनान् हरी-भरीं छन/पुंगड़ी-पटकी हमारी"

शारीरिक सौंदर्य जिस के लिये सारा कास्मेटिक उद्योग नये-नये आविष्कार करता है, इस स्त्री के लिये तो बेमानी है-

"सौ-सिगार क्या होंदू नि जाणी/फेंकना फट्याँ छन/गलाड़ी तिड़ीं छन
बर्खा बतवोण्यूँ मा रिझीं छन/पुंगड्यों का छामन गति फुर्की छन"

काम के बोझ तले यकुलाँस (अकेली) स्त्री जवानी में ही अपना लावण्य खोकर बुढ़ाने लगती है तो देवर पूछ बैठता है-

कख हवैन बौजी सुरम्यातनी आँसि/कख वू
धौंपेलू गाई करन वौ वर फूँद हो।

नेगी जी बताते हैं कि फौजी पिता की अनुपस्थिति में समस्त पारिवारिक एवं सामाजिक जिम्मेदारी निभाती अपनी माँ के कष्टों को टटोलते-टटोलते वे पूरे पहाड़ी समाज को गहराई से समझ पाये और समाज के दर्द को गाते खुदेड़ गीतों के गायक बन गये।

बड़ी आशाओं से गरीबी झेलकर बेटे को पढ़ा-लिखा कर उसका घरबार बसाकर एक माँ उपेक्षित महसूस कर रही है-

कन लड़ीक बिगड़ी मेरू ब्वारि कैरिकी
कैमा लगौण छर्वी अपणी खैरि की.....

(बहु लाकर मेरा बेटा कैसे बिगड़ा, अपने दुखड़े किसको सुनाऊँ, नथ बेचकर जिसे पढ़ाया, खेत बेचकर जिसका विवाह किया आज वह हमें पहचानता भी नहीं...)।

एक पहाड़ी स्त्री की वेदना नेगी जी ने इन शब्दों में व्यक्त की है -

कबि सीला पाखौं रीटू कबि तैला घाम
घस नी च पाणी माँजी ये लोळा डाँडा मा...

(अरी माँ! घास लाने के लिये मैं कभी सीलनभरे तप्पड़ में घूमती हूँ और कभी तेज धूप में। मेरी ससुराल के इस निगोड़े पहाड़ में न घास है न पानी। मायके का हरा-भरा वन मैं दूर से देखती हूँ.... ऐसे रूखे मुल्क में बेटी नहीं ब्याहनी चाहिये)।

माँ, पत्नी, बेटी, साली, भाभी, सास एवं समधन जैसे अनेकों सामाजिक संबंधों के माध्यम से नेगी जी ने पहाड़ी स्त्री के समूचे भावनात्मक एवं सांस्कृतिक संसार से साक्षात्कार कराया।

कम उम्र, अल्हड़ बेटी को ससुराल भेजती चिंतातुर माँ हो या नागणी बाजार (सुविधायुक्त) में रिश्ता करने के लिए बेटी को मनाते पिता, कुलैं की डाली से मन का भेद खुलता देख उसे विश्वास में लेती किशोरी हो या मेले ले जाने की जिद करते जीजा के लिये प्यार से समाधान निकालती साली हो- सबका वर्णन नेगी जी के गीतों में मिलता है। एक उदाहरण देखिये-

ओर-पोर जीजा स्याली/बीच मनै मेरी दीदी राली
चल भेना, कौथीग जौला/तेरी बी बात रै जाली

अपनी एक पहिये की गाड़ी में सारी जिम्मेदारियाँ ढेलती (यकुलाँसी) अकेली स्त्री सालों माँ-बाप और भाई-बहनों को नहीं मिल पाती थी। चैत के महीने मायके के पहाड़ से आती घुघूती स्वर सुनकर वह आकुल हो जाती है-

घुघूती घुरौण लगी मेरा मैत की...
दगड़्या भग्मान चौंफला लगाला

बालसखियाँ चैत के महीने चौंफला गा रही होंगी और मुझे वर्ष भर से भाई-बहनों की राजी खुशी का भी पता नहीं। अब मैत के औजियों (ढोल वादकों) के आने का ही आसरा है। राजी खुशी जानने के लिये सूचना क्रांति के वर्तमान युग में मोबाईल के रहते भले ही ये प्रसंग अप्रासंगिक हो गये हों किन्तु दिशा भेंट, आने वाले मैत के औजियों की परम्परा और पुरानी पीढ़ी के दुख दर्दों के दस्तावेज नेगीजी के गीत नई पीढ़ी को सौंपते हैं।

नेगीजी के गीत साधारण गीतों की तरह सुनकर भूल जाने वाले मनोरंजन के साधन भर नहीं हैं। उनके गीतों में एक छोटा सा शब्द भी उस गीत का उद्देश्य समझा जाता है।

"सुण रे दिदा त्वेकु अयूँ च बौजी को सवाल"

दिदा को भाभी ने संदेश (रैबार) नहीं, सवाल भेजा है क्योंकि जबाव अब उसके वश में नहीं रहा।

हर छुट्टी में परिवार में एक संख्या वृद्धि करके पति ने बच्चों की पलटन तैयार कर ली है। बौखलाई हुई पत्नी की दुर्दशा दिखाते हुये नेगीजी परिवार नियोजन के महत्व को जन साधारण तक पहुँचाते हैं।

सावन स्त्री के लिए झूले लेकर नहीं आता। घने कोहरे, उफनते गाड़-गधेरे एवं गरजते बादलों वाली बरसात में उसकी कठिनाइयाँ और बढ़ जाती हैं।

डेरा नौन्याल अर पुंगड़्यों धाण/बर्खा का धीड़ौं मा
घासाकू नी जाण/जुकड़ी डौराली, सौण का मैना/कनुवन्वे रैण

मौसम ही नहीं, ससुराल में कई डर हैं जो उस पर लगातार हावी रहते हैं। पूरा घास लेकर ही घर जा सकते हैं अब चाहे कितने खतरनाक पहाड़ पर चढ़ना पड़े। सास का डर है-

सासू का डौरौ कु घासौ भेलू-भेलू जाँदू
रुमुक ह्वे जाँदि माँजी दगड़ू नी राँदो

पतरोल का डर है लेकिन जब लकड़ी-घास घर पहुँचेगा तभी तो दूध होगा, चूल्हा जलेगा वरना बच्चे तो भूखे ही सो जायेंगे। जंगल से जल्दी-जल्दी घर भागने की तैयारी का यह दृश्य देखिये-

बोण लखड़वेनी अर घसेनी रगर्याँद
हे दीदि! हे भुली! झट काटा बाँधा
उनी दूध्या नौन्याल, सासू रिसाड़
जिकुड़ी ममेड़्यों की धुक-धुक पोड़े रुमुवन

वन नीति बनाने वालों ने उसको पूछकर नीतियाँ नहीं बनाई। उसके जंगलों पर पतरोल की चौकीदारी और जब-तब आदमखोर होकर उसका जीना दुश्वार करता बाघ। अपने पहाड़ी लड़के जसपाल राणा के शूटिंग में मैडल जीतने की खबर से वह सोचती है..

बदूक्या जसपाल राणा सिस्त साध दे
उत्तराखण्ड मा बाघ लग्यूँ, बाघ मार दे, मनस्वाग मार दे
नथुल्यों गलै कि त्वेई सोना का मैडल द्योला
ऊपणा भै-भुलों की जिकुड़ी कु दर्द गाडदे

जीवन कितना भी कठिन हो, मौसम बदलते हैं, खिलखिलाने, सजने-संवरने एवं मेले खौलों के दिन भी आते हैं। बुराँश ओर फ्योंली जैसी पहाड़ी सौन्दर्य की प्रतिमूर्ति बने गहनों की सज धज देखकर सौंदर्य के पासरी कवि की आँखें चौंधिया गई है। उस अन्नपूर्णा के व्यक्तित्व को दर्शाने के लिये वे ऐसी उपमायें देते हैं कि किसी की भी भूख बढ़ जाय..

फरफुरु भात सी खिलाँदी हँसी
दड़बिड़ी दाल सी छ्वीं तेरी मन बर्सी

एवं

दँतुड़ी चौंलवी छपाक/आँखि चटपुटू दुंगार
गाति गलकी गोंदमी/गलोड़ी ग्यों की फुलकी
मुखड़ी परोस्यूँ सी हार

और भी

कबी-कबी क्रोध मा ह्यूँ जी जमणू तेसू
माया की ..... मा ह्यू सी गलणू तेरू

या

चरचुरु-बरबुरु नेस नराणू रिसाणू

एवम्

चौटी कसड़ी बिराणा सगोड़ै सी छै वा
सवादी यनि कि पैणे कि पकोड़ी सी छै वा
मर्चण्याँ खाण मा खीर जनि मिट्ठी सी...

पूरी सजधज के साथ मेले जाती पहाड़ी सौंदर्य की प्रतिमूर्ति का आँखों देखा वर्णन सुनकर कोई भी गढ़वाली भाषा-भाषी बार-बार सुनना चाहता है।

उसकी दराँती की धार जैसी नाक पर बुलाक, काँस की थाली जैसी खनखनाती हँसी, घुटने तक बाल और चाँद की टुकड़ी जैसी मुखड़ी पर उड़ते बाल..

कवि जब ऐसी कोमलांगी का वर्णन कर रहा हो तो गढ़वाली भाषा भी नेगी के मन्तव्य को समझने में कोई कसर नहीं रखती। ऐसी कोमलता के लिये उसके भंडार में झुल्ली, लटुली, दँतुड़ी इत्यादि शब्द इसीलिये बने हैं।

स्त्री का बाह्य एवं आंतरिक सौंदर्य पुरुष के अन्तर्मन की परतों पर नये-नये चित्रों को खींचता है। स्त्री-पुरुष के संयोग और वियोग के बहुरंगी स्वपनिल संसार में कभी चाहत व्यक्त करती बातें हैं तो कभी विरह की आकुलता। इन कोमलतम अहसासों को महसूस करते, अभिव्यक्त करते उनके गीतों को सुनकर श्रोता भी दोनों पक्षों के मनोविज्ञान की पड़ताल करने लगता है।

उनके सैकड़ों गीतों की विषय वस्तु बनी स्त्रियाँ सोचने लगती हैं कि यह कवि तो उनसे भी अधिक उन्हें पहचानता है, समझता है। नेगीजी की यही बात उनको सबसे प्रिय एवं विलक्षण कवि-गायक के रूप में स्थापित करती है।

❑❑

उत्तराखण्ड की नारी और साहित्य

❑ साधना शर्मा

साहित्य समाज का दर्पण होता है, और साहित्यकार समाज का ही एक अंग है। बिना समाज के वह जीवित नहीं रह सकता। साहित्य रचना की प्रेरणा भी उसे समाज से ही मिलती है। समाज की रीति-नीति, धर्म-कर्म आदि का उस पर बहुत प्रभाव पड़ता है। डॉ॰ सम्पूर्णानन्द ने कभी कहा था कि "लेखक के ऊपर परिस्थितियाँ निरन्तर प्रभाव डालती हैं वह बचने का प्रयत्न करे तो भी बच नहीं सकता।" उत्तराखण्ड की साहित्य परम्परा खासी समृद्ध रही है जिसमें महिलाओं का योगदान भी कुछ कम नहीं रहा है।

यह निर्विवाद सत्य इसलिये है कि साहित्यकार और समाज एक दूसरे से अभिन्न रूप से जुड़े हैं। समाज से कटा हुआ साहित्य वस्तुतः साहित्य है ही नहीं वह तो केवल शब्द आडम्बर है इससे अधिक कुछ भी नहीं। उत्तराखण्ड की नारी को यहाँ की रीढ़ की हड्डी कहा गया है। यहाँ की प्रकृति एवं परिस्थितियों का नारी के साथ गहरा सम्बन्ध है। घटनाएँ जब शब्द का रूप ले लें तो वही साहित्य बन जाता है। यही कारण है कि यहाँ के साहित्य में महिलाओं का विशेष योगदान है। उसमें महादेवी वर्मा से लेकर कहानीकार शिवानी तक ऐसे नाम हैं जिनकी पहचान आज विश्व पटल तक है।

प्रसिद्ध साहित्यकार गौरा पंत 'शिवानी' की बात करें तो उनकी पहली रचना अल्मोड़ा से निकलने वाली 'नटखट' नामक बाल पत्रिका में छपी थी, तब वह मात्र बारह वर्ष की थीं। उसके बाद उनकी रचनाएँ कालेज की पत्रिकाओं में प्रकाशित होती रही। शिवानी की पहली लघु रचना 'मैं दुर्गा हूँ' 1951 में धर्म युग में छपी थी। इसके बाद आई उनकी कहानी 'लाल हवेली' और तब से जो लेखन क्रम शुरू हुआ उनके जीवन के अन्तिम दिनों तक अनवरत चलता रहा। उनकी अन्तिम दो रचनाएँ 'सुनहुँ तात यह अकथ कहानी' तथा 'सोने दो' उनके विलक्षण जीवन पर आधारित आत्म वृतात्मक आख्यान हैं। 1989 में शिवानी को पद्मश्री से अलंकृत किया गया। इस महान लेखिका ने उपन्यास, कहानी, व्यक्ति-चित्र, बाल उपन्यास और संस्मरणों के अतिरिक्त लखनऊ से निकलने वाले पत्र 'स्वतंत्र भारत' में एक चर्चित स्तम्भ 'वातायन' लिखा। 21 मार्च 2003 में 79 वर्ष की आयु में उनका निधन हो गया लेकिन हिन्दी साहित्य में उनका नाम आज भी अमर है जिनसे प्रेरणा लेकर महिलाओं की साहित्य के प्रति रुचि बढ़ी है।

उत्तराखण्ड में महिला साहित्यकारों, कहानीकारों की बात करें तो उसमें अनेक नाम सामने आते हैं- जिनमें वीणापाणी जोशी, सावित्री नौटियाल काला 'सवि', उमा जोशी, डॉ॰ विद्या सिंह, भारती पाण्डेय, बीना बेंजवाल, नीता कुकरेती, राजेश कुमारी, नीलम प्रभा वर्मा, कमलेश्वरी मिश्रा, डॉ॰ सुमित्रा धूलिया, कुसुम भट्ट, लक्ष्मी उपाध्याय, कृष्णा खुराना आदि का नवसृजित साहित्य पाठकों के सम्मुख निरंतर आ रहा है। इन महिला साहित्यकारों के कारण ही नित प्रतिदिन साहित्य सृजन की अविरल धारा बह रही है।

अभी हाल ही में कवियत्री राजेश कुमारी द्वारा रचित पुस्तक 'काव्य-कलश' उस बगिया के समान है जिसमें हर रंग के पुष्प नजर आते हैं। पुस्तक में छन्द, दोहे, कुण्डलियाँ, चौपाई, घनाक्षरी आदि के समाहित हैं। नारी की व्यथा को उन्होंने कुछ इस तरह पिरोया है।

फिर से लो अवतार रामजी पीड़ा भारी।
कर दो फिर उद्धार दबी पत्थर में नारी॥

वहीं केदारनाथ धाम में आई आपदा को उन्होंने कुछ इस तरह उकेरा है-

केदारनाथ शिवालय भीतर, ढेर लाश के दियो लगाय।
मौत से लड़कर बच गये जो, उनकी पीर कही न जाय॥

वहीं साहित्कार कहानीकार कुसुम भट्ट स्वयं में अनोखी लेखिका हैं जो अब तक पचास कहानियाँ व सैकड़ों कविताएँ लिख चुकी हैं। प्रेमचन्द से प्रेरणा लेने वाली कुसुम भट्ट का कहना है कि हर व्यक्ति जिसे लिखना पढ़ना आता है वह लेखक बन सकता है किन्तु कम व उपयुक्त शब्दों का प्रयोग करते हुए कुछ ऐसा लिखा जाय जिसे पाठक एक बार पढ़ना प्रारम्भ करे तो वह लेख को अंत तक पढ़ने के लिए मजबूर हो जाये यही एक अच्छे साहित्यकार की पहचान है। अपने साहित्यकार बनने का श्रेय वह अपने अंदर उपजे विद्रोह को देती हैं। इनकी "नदी तुम बहती क्यों हो" कहानी पहाड़ी परिवेश पर पूरी तरह आधारित है जिसमें दर्शाया है कि महिला घर का सारा कार्य करती है, जंगल से चारा, लकड़ी आदि लाती है, घर से बहुत दूर नदी से पानी लाती है। कम उम्र में लड़की की शादी इस तरह कर दी जाती है जैसे एक गाय को एक खूंटे से खोलकर दूसरे खूंटे से बांध दिया जाता है। श्रीनगर गढ़वाल के समीप बगवान गाँव की रहने वाली कुसुम भट्ट ने सामाजिक बुराईयों को अपनी कहानी में उकेरा है। उत्तराखण्ड की महिला साहित्यकारों में एक और हस्ताक्षर है श्रीमती उमा जोशी। इनका कुमाऊँनी भाषा में महत्वपूर्ण योगदान है। जिस तरह व्यास, बाल्मीकि

और कालीदास का साहित्य संबंधित युगों के समाज एवं घटनाओं को प्रदर्शित करता है उसी तरह उमा जोशी का लेखन भी पहाड़ के सामाजिक बदलाव को दर्शाता है। इनके काव्य संग्रह "अनुभव के फूल" में टिहरी के दर्द को कुछ इस तरह वर्णित किया है–

चुप चाप सिसक रही अविरल गंगा की धारा
अवरुद्ध हो घाटियों में ढूंढती है किनारा
देव नदी भागीरथी का टिहरी को अतुल वरदान
डूब गयी है झील में वह कहाँ मिले परित्राण

उमा जोशी ने पहाड़ को कुछ इस तरह चित्रित किया है–

बसते हैं इन पहाड़ों में भी प्राण, गाते हैं ये गीत मधुर
और छेड़ें सुरीली तान, वसुधा के रखवाले ये
सजग प्रहरी से विराजमान, अथक श्रम से प्रकृति देवी ने
सजाई है ये मुस्कान।

उमा जोशी का साहित्य समाज को एक राह दिखाता है। उनके साहित्य में भावनात्मक चेतना उजागर होती है। कुछ अन्य रचनाओं में सामाजिक–सांस्कृतिक प्रश्नों से साहसपूर्वक जूझती हैं।

सच ही कहा गया है कि शिक्षा संस्थान इंजीनियर, डॉक्टर, वकील बना सकते हैं साहित्यकार नहीं। साहित्य सृजन की कला नैसर्गिक होती है, उसे मैन्यूफैक्चर नहीं किया जा सकता। ऐसी ही उत्तराखण्ड की एक साहित्यकार रही हैं लक्ष्मी उपाध्याय, जिनको पहाड़ों से, प्रकृति से बचपन से ही लगाव रहा। लेखन व अभिव्यक्ति उनके स्वभाव में थी प्रेरणा जीवन से मिली, प्रकृति से उठाये गये प्रतीकों के माध्यमों से विचारों को व्यक्त किया। पत्थर, चिड़िया, तितलियाँ, सागर, लहरें, मौसम सभी उनकी रचनाओं के माध्यम बने। अपनी एक कृति में वह एक निर्जीव पत्थर से ईर्ष्या सिर्फ इसलिए रखती हैं क्योंकि वह पत्थर जैसा नहीं बन सकती। पत्थर के गुणों को व्यक्त करते हुए उन्होंने अपनी पुस्तक 'भीगता है मन' में कुछ इस तरह लिखा है– "पत्थर तुम इतने कठोर और शांत क्यों हो, कभी अवतार बन जाते हो, कभी अवतारों पर फेंके जाते हो, तुम कोई प्रतिकार क्यों नहीं करते, पत्थर मुझे ईर्ष्या है तुमसे, क्योंकि मैं कभी तुम सा नहीं बन पाई।" लक्ष्मी उपाध्याय एक ओर जहाँ एक उपन्यासकार रहीं वहीं वह अच्छी कवयित्री भी थीं। उनका कहना था कि लेखक

और कवि में फर्क यह है कि जिस बात को पाठकों तक पहुँचाने में लम्बे लेख की आवश्यकता होती है उसी को कविता की छोटी सी पक्तियों के द्वारा आसानी से पहुँचाया जा सकता है इसलिए मैंने कविता लिखी। उनका कहना था "मैंने कभी संपादक के कहने पर अपनी भावनाओं को नहीं दबाया।" इनके लेख सरिता, कादम्बनी, नवभारत टाईम्स, साहित्य अमृत आदि में लम्बे समय तक प्रकाशित होते रहे। लक्ष्मी उपाध्याय के एक देश भक्ति गीत "देश का दुलार तू भाल का गुलाल तू" को बहुत सराहा गया जिस पर डी०एम०एम० (डायरेक्टर मिलट्री म्यूजिक) ने धुन तैयार की थी। सामाजिक घटनाओं को वह बहुत गम्भीरता से लेतीं थीं। वह कहतीं थीं कि 26 जनवरी के अवसर पर एक फौजी जो कभी भी अपने सीने पर गोली खाने से नहीं डरता और वह बहादुर सिपाही जिसने गोली सीने पर खा कर अपने प्राण गंवा दिये, उस बहादुर सिपाही की पत्नी व माँ को सम्मानित करने वाला नेता बुलेट प्रुफ जैकेट पहनकर स्वयं सुरक्षा के घेरे में रहकर सम्मानित करता है और दिखाया जाता है, यह गलत है। लक्ष्मी उपाध्याय का कहना था कि हमारे बच्चे पहले नानी, दादी की गोद में लेटकर कहानी सुना करते थे, आज अकेले वीडियो पर डरावने कार्टून देखकर भयभीत रहते हैं। इस पर उनकी पंक्तियाँ कुछ इस तरह हैं–

आज वो खेलता है बंद कमरे में वीडियो गेम अकेला
मासूम सपनों में देखता है एक कठोर चेहरा

लक्ष्मी उपाध्याय के अलावा न जाने और कितनी महिला साहित्यकार हैं जिनका समावेश इस लेख में तो क्या, किसी विस्तृत आलेख में भी शायद न हो पाये क्योंकि न जाने कितनी लेखिकायें उत्तराखण्ड के सुदूर गांवों में, छोटे-छोटे कस्बों में अपने सृजन कार्य में संलग्न होंगी। काश! उन सबका लेखन भी प्रकाशित हो, हम सब तक पहुंचे, यही कामना है।

❑❑

उत्तराखण्ड लोक साहित्य में नारी का चित्रण

डॉ. गीता नौटियाल "मासान्ती "

उत्तराखण्ड का पर्वतीय भू-भाग आर्य सभ्यता और सस्कृति का केन्द्र रहा है। यहीं पर मानव सभ्यताओं का क्रमिक विकास हुआ। वैदिक काल में आर्य-भाषा को वैदिक भाषा कहा जाता था। वही उस समय उत्तराखण्ड की लोकभाषा थी। उत्तराखण्ड की भाषा जिसे प्रसिद्ध भाषाशास्त्री पाश्चात्य विद्वान सर जार्ज ग्रियर्सन ने मध्य पहाड़ी भाषा के नाम से सम्बोधित किया, संस्कृति की रूप सम्पत्ति इस मध्य पहाड़ी भाषा में पूर्णत: सुरक्षित है। वैदिक स्वरों की ध्वनि इस लोकभाषा के लोकगीतों में विद्यमान है। यह मध्य पहाड़ी भाषा मध्य हिमालय अर्थात् गढ़वाल कुमाऊँ क्षेत्र में बोली जाती है,जो क्रमश: गढ़वाली व कुमांऊनी नाम से जानी जाती है, इनकी लिपि भी देवनागरी है।

वस्तुत: इन दोनों भाषाओं में शब्द-शक्ति की गहराई, भाषा का लालित्य और साहित्य-सृजन की असीम शक्ति है। गौरा पन्त 'शिवानी' से लेकर सुमित्रा नंदन पंत की जन्मभूमि उत्तराखण्ड कई साहित्यिक प्रतिभाओं की जन्म स्थली है।यह धरती देवभूमि के नाम से जानी जाती है। यहां के प्राकृतिक, सुन्दर वातावरण, शीतल जल, ऊँचे देवालय पर्वत श्रृंखलायें, हरे भरे वन, पशु पक्षी और यहां के लोकजीवन से बशीभूत होकर स्वत: ही यहां के लोगों के कंठ से सुरीले गीत झरने लगते हैं। जैसे चौफला में-

ओंठू का बीच दांतुडी कनी
गंठ्याई मोत्यों की माला जनी
स्वर मां हाई मीठास कनी
डांडियूं बासदी हिलांस जनी

अर्थात्- ओठों के बीच दंत पंक्ति ऐसी लग रही है जैसे मोती की माला पिरोई गई हो और स्वर की मिठास ऐसी है जैसे वन में हिलांस गाती हो।

उत्तराखण्ड लोक साहित्य की बहुत पुरानी परम्परा है जो सभी प्रकार के लोक गीतों -मांगल, जागर, पांवडा, थड़िया, चांचडी, छोड़ा, हारूल, चौफला झुमेलो ,बाजूबंद आदि में भी कविता की ही शक्ल में विद्यमान है जिसके कुछ उदाहरण हैं-

आउ मोरा गोरिया बुबा कानु बाटा अउ
कानु बाटा औलू ब्वेई कनुवा ब्वाल्दा। (जागर-गोरिल)

अर्थात्- गोरिल देवता का आवाहन जागर किया गया है कि आओ गोरिल देवता, जल्दी छोटे रास्ते से आओ, माँ जल्दी छोटे रास्ते से ही आऊंगा।

एक दन्त आगास हेरन्तो आयो
एक दन्त पाताल फेरन्तो आयो
लोहा चणा चावन्तो आयो
बज्र गोला खेलन्तो आयो (गारूड़ी)

अर्थात्- एक क्षण में समस्त आकाश देखता आया व अगले क्षण में पूरा पाताल घूम के आया, लोहे के चने चबाते आया, बज्र का गोला खेलता आया।

हे लठ्याली ! जू कैकी बौराण छै ?
धुवांसी धुपेली,पाणी सी पथली (झुमैलो)

अर्थात्- श्रृंगार गीत झुमैलो में कहा है कि हे! सुन्दरी ! तुम कौन हो ? धुयें का धुंदवयन व पानी के लहराने की प्रवृत्ति के चलते हुये व पानी के कारण तुम्हारी आकृति स्पष्ट नहीं हो पा रही है।

लोक साहित्य में उत्तराखण्ड की नारियों की स्थिति को विभिन्न गीतकारों, लेखकों, संस्कृति कर्मियों ने विभिन्न प्रकार से चित्रित किया है। इनमें सबसे जाना पहचाना रूप है उस पहाड़ी नारी का जिसका जीवन पहाड़ सा कठिन है, जो सदैव काम के बोझ के तले दबी रहती है। गढ़वाली कवि केशवानन्द कैंथोला ने 'सरू कुमैंण' नामक कविता में नारी की इस स्थिति को इस प्रकार वर्णित किया है।

घर आई गैन सांझ मा फिर
जणा बैठि पाणीकू
नौन्याल छन रौंण लग्यां
दे बोई रोटि खाण कू
रात अब होण लगीग
कब गोरू भैंसा बांदली

होलि सब अव फिकर तें
भैर-भितरा नाचणी

अर्थात्- शाम को घर आकर वह महिला अब पानी के लिये पनघट जाने लगी। घर में बच्चे रो रहे हैं कि माँ खाने के लिये रोटी दो । अब अन्धेरा हो गया। कब गाय भैसों को बांधेगी ? वह बहुत चिन्तित है इसलिये घर में बाहर अन्दर जा रही है अर्थात् किंकर्त्तव्यविमूढ है।

इसी प्रकार प्रेमवल्लभ पुरोहित 'राही' द्वारा भी महिलाओं की घरेलू कामकाज में व्यस्तता दर्शाती ये पंक्तियां नारी की वास्तविक स्थिति का चित्रण करती हैं-

पहाड़ की जनान्यूं की पीड़ा
घास लाखडा
अर पाणि बर्णी रैंदी सदनि
कैन कुछ कत्त नि जाणि
जे दिन मिटलु यु दु:ख तौंकु
वे दिन वूंकी रात ब्यालि

अर्थात्- पहाड़ की नारियों का दर्द सदैव घास, लकड़ी व पानी, उनके इस दर्द को किसी ने नहीं समझा। जिस दिन पहाड़ की नारी के दर्द का एहसास समाज को होगा, वह नया सवेरा होगा।

यह हमारे समाज की कैसी विडम्बना है कि समाज में बेटी के जन्म पर खुशी मनाने के बजाय दु:ख व्यक्त किया जाता है। इसी व्यथा को भगत सिंह भण्डारी (आमपाटा, जिला टिहरी गढ़वाल) की 'म्यारू कसूर क्या च' कविता में लिखी पंक्तियां व्यक्त करती हैं-

पीढ़ियों बटि मेरि पूजा होंदी , मेरा बिना कुछ बि नी
सृष्टि चलदी मेरि बजै सी मैं छौं त संसार वि
पर आज दुनिया मा सबसे ज्यादा होणू मेरू फतूर
कन्या छौं मैं, बैंण भी छौं, मां छौं अर मां की ममता छौं

इन पंक्तियों में बेटी अपने मन की व्यथा व्यक्त करती हुई कहती है कि पीढ़ियों से मेरी पूजा होती आ रही है। मेरे बिना कुछ भी सम्भव नहीं। मेरे ही कारण सृष्टि की रचना चलती है। जब तक मैं हूं तभी तक यह संसार है। पर आज इस दुनिया में सबसे बदहाली मेरी है, जबकि मैं कन्या, बहिन, मां और मां की ममता के रूप में सबके सामने हूँ।

नारी के अनेक रूपों में से एक रूप वीरांगना का भी है। उत्तराखण्ड के लोक साहित्य में नारी के वीरांगना रूप का सजीव चित्रण कई साहित्यकारों द्वारा किया गया है। इन वीरांगनाओं में सर्वप्रमुख नाम है तीलू रौतेली का जो मर्दों से लड़ी और उन्हें खदेड़ दिया। उदाहरण के लिए- विमल 'साहित्य रत्न' पोखड़ा की ये पंक्तियां देखिये जिनमें वे तीलू रौतेली की बहादुरी का वर्णन करते हुए लिखते हैं-

बज्र सी बढीन बढीन मरदो
मूंछ मरोडदा पैटीन मरदो
जै तीलू रौतेली बोलदीन मरदो
जै बद्री केदार बोलदीन मरदो

अर्थात् तीलू रौतेली जब अपनी सेना के साथ छोटी सी उम्र में विरोधियों से लोहा लेने के लिये तैयार हुयी तो कवि कहते हैं कि आश्चर्य है वे वज्र की तरह बढ़े । मूछों को मरोड़ते हुये तैयार हुये और जै तीलू रौतेली, जै बद्री केदार नारे लगाते हुये आगे बढ़े।

नारी के इस वीरांगना रूप से इतर गृहस्थ की मुख्य भूमिका में भी नारी ही है । बेटी, बहन, बहू, पत्नी और मां की भूमिका में नारी अलग अलग भूमिका अदा करती है। सिद्धीलाल विद्यार्थी ने अपनी कविता 'मिरसा बोल' में पुत्र की बातों से आहत मां का चित्रण इस प्रकार किया है -

ज्वनि मा रांडा दिन कटनी
भूखू प्यासू रै व्रत रखनी
भली भांति चीज कभी भी नि चखनी
मेरि विपदा निसकदू क्वी तोल
बेटा ! नि सुणौं निरसा बोल

इन पंक्तियों में माँ अपने बेटे से कहती है कि जवानी में मैंने विधवा बनकर दिन काटे। भूखे प्यासे रहकर व्रत रखे, अच्छी चीजें कभी चखी तक नहीं। मेरी विपदा का अनुमान कोई नहीं लगा सकता है। बेटे! मुझे निराश करने वाली वाणी मत सुना।

महिला बिना पुरुष के सहारे अपने आप अपने बच्चों का पालन पोषण करती है। लेकिन उसके त्याग का आकलन पुरुष प्रधान समाज में उसका बेटा भी नहीं कर सकता जिसके लिये उसने असह्य पीड़ायें सही हैं। बचपन से ही उत्तराखण्ड की नारी घरेलू कार्यों के बोझ से दबी

रहती थी। इसका वर्णन कैलाश बहुखण्डी 'जीवन' (कोटद्वार पौड़ी गढ़वाल) ने अपनी कविता 'छोरी' में किया है–

मि दिखणू छूं
एक काल्लि लाटि जनि नौनि थैं
मुण्डक छन फैल्यां लटुला इनै उनै
चिरयूं बिलोज अर गन्दा धुतड़ा मां
कनि च धाण । अभि त गौडि पिजाण
पीण्डु बणांण गोरू चराण
अर सरा धाराक भाण्डा भि मजांण

अर्थात् मैं देख रहा हूं एक साधारण सी लड़की उसके सिर के बाल इधर उधर फैले हैं और वह फटे ब्लाउज गन्दी धोती में ही है । काम बहुत है – गाय से दूध निकालना, सानी बनाना, गायें चराना और धारे पर रखे सारे बर्तन साफ करने हैं।

नारी की इसी व्यस्तता को दिखाती हैं उमा भट्ट (अन्द्रवाड़ी, रुद्रप्रयाग) की 'भौत जरूरी' कविता में लिखी ये पंक्तियां –

तु सुबेर बटि लैगी रात होण तक
तिन सब्बू कि पूछि पर तेरि कैल पूछि
खाण बटि स्यौण तक

इन पंक्तियों में कवयित्री नारी को सम्बोधित करते हुये कहती है कि तू सवेरे से रात होने तक काम पर लगी है। तूने सबके खाने पीने सोने की व्यवस्था की पर तुझको किसी ने खाने से सोने तक पूछा ? अर्थात् किसी ने नहीं।

नारी की नैसर्गिक सुन्दरता का वर्णन करती शकुन्तला इष्टवाल (धारकोट, कपोलस्यूं, पौड़ी गढ़वाल) की 'डांडियों की दगड्या' नामक कविता की कुछ पंक्तियाँ इस प्रकार से है–

बात तेरी छन मीठि हिलांस
बातों मा तेरी च शहदी मिठास
तेरि यूं बातों म धराति च स्वाणी
कन प्यारी, कु छै तू कैन नि जाणी

अर्थात् तेरी बातें हिलांस की बोली की तरह मीठी हैं । तेरी बातों में शहद की सी मिठास है । तेरी ऐसी बातों से धरती सुन्दर है। तू कितनी प्यारी है? कौन है? किसी ने नहीं जाना।

माँ के रूप में महिला का कर्मठ एवं त्यागी और आदर्श रूप दिखाती बीना बेंजवाल की ये पंक्तियां 'ब्वै' नाम कविता में लिखी गई हैं –

अफ्फु खुणि पहाड जचि अजण्ड
हमुतैं बग्दि गंगाळ च ब्वै
मयळयु धरति कि जौंळया बैंण
सृष्टि रचण वळि किलकिताळ च ब्वे

अर्थात्– माँ अपने लिये पहाड़ की तरह मजबूत और कठोर है और हमारे लिये बहती हुई नदी और दयालु पृथ्वी की जुड़वा बहिन है। मां सृष्टि रचने वाली चीख है।

महिला का श्रृंगारिक वर्णन करती ये केशवानन्द ध्यानी की पंक्तियां –

पाणि जनी पथळी रूआं जसी हपळि
डाळि जसी सुड़सड़ी, कंठ की सी बडुळी

अर्थात्– पानी की सी पतली, रूई जैसी मुलायम, पेड़ की तरह ऊँची और गले की बाडुली (हिचकी) की तरह प्यारी है। महिला का वर्णन लोक साहित्य में दुर्गा प्रसाद घिल्डियाल (पैंडलस्यूं पौड़ी) द्वारा अपनी कविता 'रैबार' में एक प्रेरक के रूप में किया गया है कि माँ किस प्रकार अपने बेटे को प्रेरित करती है –

विदेशु रण मा त्वे तै पठै छौ
निर्भैन तिन बल, भला हि काज
रखे तिन म्येरा दूधे की लाज

अर्थात्– माँ कहती है कि मैंने तुझे लड़ाई में घर से बाहर भेजा था, मैंने सुना है कि तुमने अच्छे अच्छे कार्य निभाये हैं। तूने मेरे दूध की लाज रखी है, अर्थात् मेरा सम्मान बढ़ाया है।

सास–बहू के रिश्ते को हमारे समाज में प्रायः इस दृष्टि से देखा जाता है जिसमें महिला ही महिला के प्रति असंवेदनशील हो जाती है। महिला की महिला के प्रति इस कठोरता का उदाहरण कुलानन्द भारतीय (जामणी सल्ड, पौडी गढ़वाल) की कविता 'काकी कू रैबार' में स्पष्ट झलकता है–

दिन रात मी त कटदू घास
ब्वै बाप तुमरा नि गडदा बाच

अर्थात्- एक सास की सताई बहू अपने पति से कहती है कि मैं तो दिन रात घास काटती हूँ फिर भी तुम्हारे मां-बाप मेरे साथ नहीं बोलते हैं।

इसी प्रकार घर में ससुराल वालों के रूखे व्यवहार से ऊबी पहाड़ी नारी जब घास के लिये जाती है तो अपना मनोरंजन जंगलों में करती है। इसका सजीव वर्णन श्रीधर जमलोकी (ऊखीमठ, रुद्रप्रयाग) ने कुछ इस प्रकार से किया है-

मधुर गीत तू गांदी
रूखी दुनिया से ऊबीक
सिराणी कमरि बांधी
रूम झूम कदी तू जांदी
आनन्द बणू मां पांदी

अर्थात्- हे नारी! तू निर्दयी दुनिया से ऊबकर मीठे गीत गाती है। कमर पर रस्सी बांधकर और हाथ में घुंघरू वाली दरांती पकड़े झूमती हुई जंगल को जाती है और आनन्द प्राप्त करती है।

लोक साहित्य में नारी के पतिव्रता रूप का वर्णन 'रामी बौराणी' के रूप में बलदेव प्रसाद शर्मा 'दीन' (बामसू, टिहरी गढवाल) द्वारा रचित इन पंक्तियों में मिलता है-

जोगी ह्वेक भी आंखी नि खोली
छैलू बैठालि त्येरि दीदी भूली

अर्थात्- योगी रूप में अपने पति की बातें सुनकर पतिव्रता रामी बोलती है- योगी होकर भी तुम्हारी आंखें नही खुली हैं, जो मुझको पेड़ की छाया में बैठने को कहते हैं, छाया में तुम्हारी बहनें तुम्हारे साथ बैठेंगी।

हमारे समाज में सात-आठ दशक पहले किस प्रकार छोटी -छोटी बेटियों की शादी कर दी जाती थी और वे अपने मायके की याद में आंसू बहाती रहती थीं। इस मार्मिक स्थिति का चित्रण भजन सिंह (सितोनस्यूं, पौड़ी गढ़वाल) द्वारा 'खुदेड बेटि' नामक कविता में इस प्रकार किया गया है-

"बौड़ि-बौड़ि ऐगे ब्वे देख पूस मैना
गौं कि बेटि ब्वारी ब्वे मैत आइ गैन"

अर्थात्- हे माँ! पौष का महीना फिर लौटकर आ गया है।गांव की सभी बेटियाँ एवं बहुएँ अपने अपने मायके चली गयी हैं। मुझे मायके की याद आ रही है।

उत्तराखण्डी नारी अपने पति की उपस्थिति में ही अपना महत्व समझती है, अन्यथा कुछ भी नहीं, इसका वर्णन तारादत्त गैरोला (जाखंड, टिहरी गढवाल) द्वारा 'विरहिणी बाला' नामक कविता में किया गया है-

जै रोज से तुम गयां पिय मैक छोडी
सी मोल मेरू तुम बिन त एक कोड़ी

अर्थात् पति के वियोग में पत्नी कहती है कि हे! पतिदेव जब से तुम मुझे छोड़ कर गये हो, तुम्हारे बिना मेरी कीमत एक कौड़ी के बराबर ही रह गयी है।

श्रृंगार रस का रोचक वर्णन 'रिश्ता' नामक कविता में आशीष सुन्दरियाल (रिंगालस्यूं, पौडी गढ़वाल) द्वारा इस प्रकार किया गया है-

मी अर वा
कन छां
जन फूल अर कांडु
अव सवाल यो छ कि
फूल को? अर कांडु को?
त जै खुणि व फूल
तै खुणि मै कांडु
अर जैखुणि मै फूल
तै खुणि वा कांडु

इन पंक्तियों में पति अपना और अपनी पत्नी का परिचय देता हुआ कहता है -मैं और वह कैसे हैं? जैसे फूल और कांटा। अब प्रश्न यह है कि कौन फूल है और कौन कांटा। जिसके लिये मैं फूल हूँ उसके लिये वह कांटा है।

नित नई समस्याओं से जूझती अकेली महिला का वर्णन शेरसिंह गद्देशी (श्रीकोट, पौड़ी गढ़वाल) द्वारा मार्मिक रूप से निम्न पंक्तियों में किया गया है-

मैरा बाना रै ब्वे ऊंकू बारामास
परदेश बास ब्वे जिकुडि उदास
छोडिक अपणी कलेजै टुकडी
खाणू छूँ फॉस ब्वे गला बॉधि ज्यूड़ी

अर्थात्- पति के वियोग में निराश महिला अपनी मां को सम्बोधित करती हुई कहती है कि - हे मां ! मेरे बहाने मेरे पति का बारह महीनों तक घर से बाहर निवास रहा। मेरा मन उदास बहुत उदास हैं, मैं अपने कलेजे की टुकड़ी अपनी बेटी को छोड़कर गले में रस्सी बांधकर फाँसी लगा रही हूँ।

इस कटु सत्य की अनदेखी नहीं की जा सकती कि उत्तराखण्ड में विभिन्न परिस्थितियों से जूझती हुई अनेकों नारियां फाँसी लगाकर या नदी में कूदकर आत्महत्याऐं करती थी। बेटियों को कठपुतली जैसा बनाने का प्रयास किया जाता था।इस व्यथा को उजागर करती गढ़गौरव नरेन्द्र सिह नेगी (नान्दलस्यूं, पौड़ी गढ़वाल) की 'ओळणा' की ये पक्तियाँ देखिये-

तुमुन मैं लारा लौण -पैराण सिखैनी
पर मनमर्ज्यू पैरण नि दे
किलैकि तुमथें अपडा घौर मां
बेटि का जगा।
कठपोथलि चहेणी छै।

बेटी अपनी ब्यथा को व्यक्त करती हुई कहती है कि तुमने मुझे लाना, पहनाना खूब सिखाया परन्तु अपनी इच्छा का कुछ भी पहनने नहीं दिया क्योंकि तुम्हें अपने घर में बेटी की जगह कठपुतली चाहिये थी जो तुम्हारी ही इच्छा पर कार्य करें।

'बेचारी' नामक कविता में सुरेन्द्र पाल (खतस्यूं, पौड़ी गढ़वाल) ने नारी को शिक्षा के क्षेत्र में बढ़ते हुए तो दिखाया है, साथ ही उसकी विवशता का भी वर्णन किया है-

पाटि बोलख्या
रिंगाल की कलम से कम्प्यूटर तक पौछिगें
नारि
फिर्बी किले होलि "बेचारि"

अर्थात्- पाटी-वोल्ख्या और रिंगाल की कलम से कम्प्यूटर तक नारी पहुंच गयी लेकिन फिर भी वह बेचारी है।

नारी सेवा और त्याग की प्रतिमूर्ति मानी गई है, उत्तराखण्ड की नारी भी कुछ अलग नहीं। वह दिन-रात दूसरों का ध्यान रखती है लेकिन स्वयं अपने शरीर का ध्यान नहीं रख पाती।इसी सत्य को उजागर करती हैं नीता कुकरेती (सुमाड़ी, पौड़ी गढ़वाल) द्वारा लिखी गई ये पंक्तियाँ-

बाटा मां बैठि अपडि खुट्यूँ की
पोड़ि बिवाई हैरदी रयूँ

अर्थात्- रास्ते में बैठकर मैं अपने पैरों की बिवाइयों को देखती रही।

भवानी दत्त थपलियाल द्वारा अपनी कविता 'बसन्त होली' में उत्तराखण्डी नारियों का परिश्रमी रूप बड़े ही सटीक शब्दों में चित्रित किया गया है-

मेरि त बानि सदानि उडी, लाखडु घासु का बोझ मुडि
जौबन बौग्यो पस्यो दगडि हिरिरि हिरिरि री

अर्थात्- महिला कहती है कि मेरा स्वास्थ्य तो सदा ही घास और लकड़ी के बोझ के नीचे उड़ गया। मेरी जवानी पसीने की धाराओं के साथ बह गयी।

इन सभी कविताओं, लोकगीतों के उदाहरणों से स्पष्ट है कि उत्तराखण्ड की महिलाओं का जीवन पहाड़ सा कठिन रहा है। किन्तु वर्तमान में कुछ परिवर्तन भी हुआ है जो साहित्य कारों की लेखनी से दिखाया गया है-

नौनि ते जरा पछांणा, नि मारा काम चल्दा वी अच्छाणा
समझदा नि छई बात वीं तेई माणदा रात
मां का पेट वी नि मारा काम चल्दा वीं से सारा
बछ द्वी कुलू कि जोत कबि नि करा वीं कि मौत

अर्थात्- बेटी के प्रति समाज की भावना जगाते हुए यह विचार दिया गया कि बेटी को पहचानो, उसे मत मारो। बेटी के महत्व को क्यों नही समझते हो? उसे दु:ख देने वाली क्यों मानते हो? ऐसे मां के पेट में मत मारो, उसी से यह सारी दुनिया चलती है। वह दोनो कुलों की ज्योति है, उसकी हत्या कभी भी मत करना।

आज की नारी और पहले की नारियों की तुलना करती ये दो कवितायें अवश्य पठनीय हैं-

हेलो ! हेलो ! हेलू !
दादी !
बौनू छौ
खूब छै तू
बुबा यु त रूपया घुलद
तब वच्यांद (वीणापाणि जोशी)

(हैलो ! हैलो ! हैलू ! हे दादी ! हाँ, मैं बोल रही हूँ। तू ठीक है ? बेटा ये तो रूपये खाता है और तब बोलता है)।

ब्वारि घास कटणु क
मन से नि च राजि
मोवाइल धरयां छन हाथ मां
बंणि छन बिल्कुल निकाजी

बहू घास काटने के लिये मन से तैयार नही है,हाथ में मोबाइल रखा है और बिल्कुल काम नहीं कर रही है।

(जगमोहन सिह जायड़ा, बागी नौसा, टिहरी गढ़वाल)

मुरली दीवान देवर (नागनाथ पोखरी, चमोली) ने अपनी लेखनी द्वारा आज की नारियों का आह्वान प्राचीन प्रसिद्व नारियों का उदाहरण देकर किया है-

नारि अपणी चरित्र निर्माण करूँ
सामाजिक काम करू, घाण करूँ
तीलू रौतेली सी नारि, रामी बौराणी सी ब्वारि
मुल्क मा अपणि अलग अलग पछाण करू

अर्थात् नारी अपने चरित्र का निर्माण करे, सामाजिक कार्य करें, घरेलू काम करे, तीलू रौतेली सी बीरांगना बने, रामी बौराणी सी बहू बने, देश में अपने अच्छे कार्यों द्वारा अलग पहचान बनाये।

उपरोक्त उदाहरणों से स्पष्ट है कि उत्तराखण्ड के लोक साहित्य में नारी के विविध रूपों का सजीव, मर्मस्पर्शी तथा सटीक चित्रण किया गया है। यदि कुछ कविताओं और गीतों में उत्तराखण्ड की नारी के उस रूप का चित्रण है जिसमें वह अपने परिवार के लिये कठोर परिश्रम करते हुए बचपन से बुढ़ापे तक अपनी जिन्दगी खपा देती थी, उत्तराखण्ड के किसी सुदूर पहाड़ी गांव में गुमनाम जिन्दगी बसर करते हुए पहाड़ियों में विलीन हो जाी थी, तो कुछ अन्य कविताओं में उसके अदम्य साहस और शौर्य का भी वर्णन है जिसमें तीलू रौतेली जैसे वीरांगना का चित्रण है। जहाँ कुछ कविताओं में उसकी नैसर्गिक सुन्दरता, उसके मोहक रूप का वर्णन है तो वहीं उसकी असहायता, उसके एकाकी पन का भी मार्मिक वर्णन है। किन्तु ठीक ही कहा गया है कि समय सदैव एक सा नहीं रहता, समय बदलता है और समय बदलने के साथ स्थितियां भी बदलती हैं। आज के उत्तराखण्ड की नारियाँ भी अब पहले सी असहाय, विवश नहीं रहीं। वे आज हर क्षेत्र में अपना परचम लहरा रही हैं। शिक्षा, साहित्य, राजनीति, विज्ञान के क्षेत्र में अपनी अलग पहचान बना रही हैं। कठिन परिस्थितियों की डगर पर आगे बढ़कर परिवार से लेकर देश सेवा, सामाजिक क्षेत्र में अपने दायित्वों का कुशलता से निर्वहन कर रही हैं। उनके विषय में मैं यही कहना चाहूंगी–

तन–मन धन से जोशीली हैं नारियाँ
घर परिवार समाज से जूझती है नारियाँ
लिंग जाति भेद से उभर चुकी नारियाँ
जन मन की धारणा मोड़ चुकी नारियाँ
पगचाप आहटें सुना रही नारियाँ
साहस जोश अब दिखा रही नारियाँ
कार्यक्षेत्र अपना बढा रही नारियाँ
सभी जिम्मेदारियों को निभा रही नारियाँ
नारियाँ नारियाँ नारियाँ नारियाँ

❑❑

साहित्यकारों का परिचय

वीणापाणी जोशी- साहित्य सृजन एवं समाजसेवा हेतु समर्पित वीणापाणी जोशी उत्तराखण्ड की वरिष्ठतम कवयित्रियों में से एक हैं। सन् 1937 में जन्मी वीणापाणी जोशी बहुमुखी व्यक्तित्व की धनी हैं। हिन्दी, गढ़वाली, कुमाऊँनी, संस्कृत, अंग्रेजी, ब्रज, अवधी तथा पंजाबी आदि अनेक भाषाओं की विदुषी आपने जहाँ एक ओर अनेक शोध परक निबन्ध यथा उत्तराखण्ड की महिलाओं पर शोध निबन्ध, श्री चन्द्र कुंवर बर्त्वाल पर अनेक शोध निबन्ध लिखे हैं वहीं दूसरी ओर अखिल भारतीय गढ़वाल सभा द्वारा प्रकाशित मासिक पत्र 'गढ़ जागर' तथा कई वार्षिक स्मारिकाओं की सह-सम्पादक भी रही हैं। उत्कृष्ट साहित्य सृजन के लिये के लिए आपको अनेक सम्मान मिल चुके हैं जिनमें उत्तराखण्ड गौरव सम्मान, कलाश्री सम्मान, साहित्य शिरोमणि सम्मान, शिवानी मातृ शक्ति सम्मान, सारस्वत सम्मान, राष्ट्रीय शिखर सम्मान, बसन्तश्री सम्मान, श्री देव सुमन पुरस्कार, उत्तरायणी रत्न अवार्ड, पर्वत गौरव सम्मान, कुंवर सिंह नेगी कर्मठ सम्मान आदि प्रमुख हैं। उत्तराखण्ड शोध संस्थान तथा विश्वम्भर दत्त चंदोला शोध संस्थान जैसी अनेक संस्थाओं से जुड़ी वीणापाणी जोशी के अनेक लेख व कवितायें विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में छप चुके हैं एवं आकाशवाणी नजीबाबाद, पोर्ट ब्लेयर तथा प्रसार भारती दूरदर्शन से आपकी कवितायें प्रसारित हुई हैं। अब तक आपके तीन काव्य संग्रह प्रकाशित हो चुके हैं।

डॉ. विद्या सिंह- एम.के.पी. (पी.जी.) कॉलेज, देहरादून में हिन्दी विभाग की अध्यक्ष तथा एसोसिएट प्रोफेसर डॉ. विद्या सिंह एक जानी मानी प्रबुद्ध लेखिका हैं। हिन्दी के साथ-साथ अंग्रेजी विषय में भी स्नातकोत्तर उपाधि प्राप्त डॉ. विद्या सिंह ने अनेक राष्ट्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय सेमिनारों में सहभागिता की है। आकाशवाणी तथा दूरदर्शन से आपकी कहानियों, कविताओं तथा वार्ताओं का नियमित प्रसारण होता रहता है। अनेक पत्र-पत्रिकाओं यथा- वागर्थ, समकालीन भारतीय साहित्य परिकथा, आधारशिला, लोकगंगा, वर्तमान साहित्य, अभिनव मीमांसा, संचेतना, अक्षरम्, संगोष्ठी आदि में आपकी कवितायें, कहानियां तथा समीक्षात्मक लेख प्रकाशित हुए हैं। आपकी कहानी 'समरूपा' का उड़िया में अनुवाद हुआ है। नेपाल, कम्बोडिया, वियतनाम, थाईलैंड, मारीशस, स्विटजरलैण्ड, बैल्जियम, हॉलैण्ड, फ्रांस, अमेरिका आदि अनेक देशों का भ्रमण कर चुकी डॉ. विद्या सिंह का एक कहानी संग्रह शीघ्र प्रकाश्य है।

सुमित्रा धूलिया- केन्द्रीय अध्यापन विज्ञान संस्थान सी.पी.आई. इलाहाबाद से प्रोफेसर के पद से सेवानिवृत्त श्रीमती सुमित्रा धूलिया उत्तराखण्ड की वरिष्ठतम लेखिकाओं में से एक हैं। जाने माने स्वतंत्रता सेनानी स्व. भैरव दत्त धूलिया (सम्पादक, कर्मभूमि कोटद्वार गढ़वाल) की पुत्रवधु सुमित्रा धूलिया ने अनेक पत्र पत्रिकाओं में लेखन किया है। केन्द्रीय अध्यापन विज्ञान संस्थान इलाहाबाद द्वारा आयोजित अनेक शैक्षिक गोष्ठियों की आप संचालिका रहीं हैं तथा आकाशवाणी इलाहाबाद और नजीबाबाद से आपकी अनेक वार्तायें प्रकाशित हुई हैं। पर्वतीय जन-परिषद् इलाहाबाद द्वारा प्रकाशित 'वसुधारा' की सम्पादक होने के साथ-साथ आप पं. भैरवदत्त धूलिया स्मृति ग्रंथ की सह सम्पादक भी रही हैं। आप अनेक संस्थाओं की सदस्या हैं जिनमें प्रमुख हैं- 'गढ़वाल की जीवित विभूतियाँ परामर्शदात्री समिति' 'वरिष्ठ नागरिक कल्याण समिति, देहरादून', 'हिन्दी साहित्य समिति देहरादून' तथा 'विश्वंभर दत्त चन्दोला शोध संस्थान' आदि।

श्रीमती नीता कुकरेती- एस जी आर आर गर्ल्स इन्टर कॉलेज से प्रधानाध्यापिका पद से सेवानिवृत्त श्रीमती नीता कुकरेती ने शिक्षा के क्षेत्र के साथ-साथ कला क्षेत्र में विशिष्ट पहचान बनाई है। ये गढ़वाली लोक गीत एवं लोक संगीत हेतु 36 वर्षों से आकाशवाणी की वरिष्ठतम उच्च श्रेणी कलाकार हैं। गत 9 वर्षों से दूरदर्शन केन्द्र देहरादून की उच्च श्रेणी कलाकार हैं। श्रीमती कुकरेती का उत्तराखण्ड की अनेक साहित्यिक, सामाजिक पत्र पत्रिकाओं में सम सामायिक विषयों पर लेख, कविता एवं गीत के माध्यम से निरन्तर विचार प्रवाह चल रहा है । प्रदेश की सभी प्रमुख साहित्यिक, सामाजिक एवम् सांस्कृतिक संस्थाओं की सदस्य श्रीमती कुकरेती राष्ट्रीय पर्वों यथा 15 अगस्त एवं 26 जनवरी के अवसर पर अखिल भारतीय कवि सम्मेलनों में निरन्तर भागीदारी करती रही हैं। इनके प्रमुख प्रकाशित लेख- उत्तराखण्ड के लोकगीत (1998), गढवाल के लोकगीतों में प्राकृतिक सौंदर्य एवं जीवन की अनुभूति (1998), उत्तराखण्ड की महिमा (2000), उत्तराखण्ड के विकास में नारी शक्ति की भूमिका (2000), उत्तराखण्ड का अतीत एवं सुनहरा भविष्य (2000) उत्तराखण्ड राज्य प्राप्ति के आन्दोलन में शहीद हुए महामानवों को श्रद्धाजंली स्वरूप कविता -जाण त हमतैं पड़ीगे (2002), गढ़वाली लोकगीतों का काव्य शास्त्रीय अध्ययन (2001) आदि हैं।

इनकी अन्य उपलब्धियाँ हैं- रत्नांक, उत्तराचंल, हिमाञ्जलि, लोक गंगा, गगरी, भावाञ्जलि आदि पत्रिकाओं व उत्तराखण्ड कौथीग की स्मारिकाओं में लेख व कविताओं का प्रकाशन। अन्तर्राष्ट्रीय बालिका दिवस एवं महिला दिवस के अवसर पर संगोष्ठी का संचालन एवं संयोजन। संस्कृति विभाग उत्तराखण्ड शासन की प्रतिनिधि कलाकार। विभिन्न साहित्यिक

सांस्कृतिक संस्थाओं यथा अखिल गढ़वाल सभा देहरादून, संस्कार भारती देहरादून, धाद, हिन्दी साहित्य समिति देहरादून, नवाभिव्यक्ति विद्योत्तमा विचार मंच, विश्व संवाद केन्द्र, उत्तरांचल उत्थान परिषद आदि द्वारा समय-समय पर सम्मानित।

कृष्णा खुराना- अंग्रेजी में एम.ए. श्रीमती कृष्णा खुराना नारी शिल्प इन्टर कॉलेज से प्रवक्ता पद से सेवानिवृत्त हुई हैं। आपकी सामाजिक सेवा के क्षेत्र में विशेष रूचि है तथा आप विभिन्न शैक्षिक व सामाजिक संस्थाओं जैसे यूनीवर्सिटी वीमैन्स एसोसियेशन, महिला सामाख्या उत्तराखण्ड इत्यादि से जुड़ी हैं। आपने अनेक लेख, कहानियाँ, कवितायें तथा समीक्षायें लिखी हैं जो समय-समय पर विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में छपती रही हैं। इनकी एक कहानी 'अन्त में' को कमलेश्वर कहानी प्रतियोगिता में द्वितीय पुरस्कार मिला। एक अन्य कहानी का उर्दू में अनुवाद हुआ है। इनकी बहुत सी कवितायें तथा कहानियां आकाशवाणी नजीबाबाद से प्रसारित हुई हैं तथा आपने देहरादून दूरदर्शन के अनेक कार्यक्रमों में भाग लिया है। आपने थियेटर में भी काम किया है।

बसन्ती मठपाल- बाईस वर्षों तक अध्यापन कार्य से जुड़े रहने के पश्चात् प्रधानाध्यापिका पद से स्वैच्छिक सेवानिवृत्ति लेने वाली डॉ. बसन्ती मठपाल उत्तराखण्ड की जानी मानी लेखिका हैं। शिक्षा, विधि तथा पत्रकारिता विषयों में स्नातक उपाधि के पश्चात आपने एम. ए. हिन्दी प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण किया तथा 'विष्णु प्रभाकर और उनका नाट्य साहित्य' शीर्षक पर शोध उपाधि प्राप्त की। अनेक राष्ट्रीय एवं राज्य स्तरीय कवि सम्मेलनों का संचालन कर चुकी डॉ. मठपाल ने विश्व विद्यालय अनुदान आयोग (यूजीसी) की उच्च स्तरीय पुस्तक रचना योजना के अन्तर्गत 'डॉ. शंकर दयाल शर्मा: व्यक्तित्व-कृतित्व एवं जीवन दर्शन' पुस्तक लिखी। आपकी कवितायें, लेख व समीक्षायें विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं यथा कादम्बिनी, पारिजात, गढ़ गौरव, लोक गंगा, पर्वतीय बिगुल, डांडी कांठी, रत्नांक, रंत रैबार, नवाभिव्यक्ति, अरिहंत, नवोदित स्वर आदि में प्रकाशित हुये हैं। इसके अतिरिक्त आपने दूरदर्शन की अनेक काव्य गोष्ठियों व परिचर्चाओं में सहभागिता की हैं। आकाशवाणी नजीबाबाद से भी आपकी कवितायें वार्तायें तथा परिचर्चा प्रसारित हुई हैं। वाडिया हिमालय भू-विज्ञान संस्थान में व्याख्यान के साथ मानव विज्ञान संस्थान की हिन्दी कार्यशाला में मुख्य वक्ता रही डॉ. मठपाल ने विभिन्न साहित्यकारों जैसे वीणापाणी जोशी, डॉ. राजनारायण राय, हेमचन्द्र सकलानी तथा डॉ. योगम्बर बर्त्वाल आदि की रचनाओं की समीक्षा की है।

भारती पाण्डे- उत्तराखण्ड साहित्य जगत में विशिष्ट पहचान बनाने वाली भारती पाण्डे का संगीत (गायन तथा वादन) तथा पत्रकारिता के क्षेत्र में भी सक्रिय योगदान रहा है। अखिल

भारतीय स्तर की पत्र-पत्रिकाओं में आपके अनेक लेख पकाशित हो चुके हैं। चिन्तन सम्वाद (खण्ड काव्य) कुन्ती विमर्श (खण्ड काव्य) अतिक्रान्त (उपन्यास), कुमाऊँ की लोक कथा, एपण पुस्तक, कविता परिदृश्य, कविता सहयात्रा में प्रतिनिधि कवितायें संग्रहीत, कुमांउनी लोककथा का थ्क्वीड़' तथा कथा सरोवर, हिन्दी-कुमांऊनी, गढ़वाली, जौनसारी शब्द कोष ये सब आपके कृतित्व के विस्तृत आयाम को झलकाते हैं। आकाशवाणी लखनऊ, नजीबाबाद, अल्मोड़ा, बडोदरा तथा अहमदाबाद से आपकी कहानी, कविता, वार्ता तथा साक्षात्कार प्रसारित हुए हैं। कई पत्रिकाओं जैसे 'घुघुती समौण', 'कला मंजरी', 'नवाभिव्यक्ति', 'रंत रैबार' आदि का सम्पादन करने के अतिरिक्त आप 'भारत विकास परिषद्', 'धाद महिला सृजन एकांश कूर्मांचल सांस्कृतिक एवं कल्याण परिषद्' आदि विभिन्न संस्थाओं से जुड़ी हैं। आपको 'प्रतिभा सम्मान' तथा 'सेवा रत्न' जैसे अनेक पुरस्कारों से सम्मानित किया गया है।

सावित्री काला- उत्तराखण्ड की वरिष्ठ कवयित्री सावित्री काला 35 वर्षों तक राजकीय विद्यालयों में सेवा करने के पश्चात् केन्द्रीय विद्यालय एफ.आर.आई. से वरिष्ठ प्रवक्ता के रूप में सेवानिवृत्त हुई हैं। आप विधि सलाहकार, कई संस्थाओं की संरक्षिका, अध्यक्ष तथा उपाध्यक्ष के रूप में समाज के विभिन्न क्षेत्रों से जुड़ी हैं। बहुमुखी प्रतिभा की धनी आप अनेक पुरस्कारों से अंलकृत हुई है। यथा- राष्ट्रीय अपंग विकास संस्था 'नेशो' द्वारा सेवा रत्न (2007), सेवा भूषण (2007), लेखन मित्र (2008), शैलपुत्री सम्मान (2010), व्याख्यान प्रतियोगिता सम्मान (2011), हिन्दी साहित्य समिति द्वारा प्रदत्त सम्मान पत्र (2012), NMFO अवार्ड (2013), विशिष्ठ सेवा सम्मान (2014), नारी शक्ति सम्मान (2014), हिन्दी गौरव सम्मान (2014 मॉरिसस), उमा शक्ति सम्मान (2015), आधारशिला हिन्दी भूषण सम्मान (2015)। आपकी रचनाओं में मुख्य हैं- (कविता संग्रह) यह मेरी नदी है, रिश्ता, दरिया, मुश्किल में हैं बेटियाँ, सप्तपदी, अनुभूति, नारी, आसक्ति/विरक्ति, अधूरा एहसास, (कहानी संग्रह)- एक पल, दिशा, अर्धशती। इसके अतिरिक्त विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में विभिन्न लेख कहानी व समीक्षा प्रकाशित होती रहती हैं तथा आकाशवाणी दिल्ली तथा नजीबाबाद से समय-समय पर आपकी कविताओं का प्रसारण होता रहता है। इसके अलावा आपकी नवीनतम रचना आत्मकथात्मक शैली में है 'साहित्यिक यात्रा का एक दशक' जो अगस्त 2015 में प्रकाशित हुई।

रजनी कुकरेती- सन् 1962 में देवप्रयाग में जन्मी रजनी कुकरेती ने गणित में एम.एस.सी, बी.एड., जी.एन.आई.आई.टी. डिग्री प्राप्त की है। आपने गर्वमेंट इन्टर कॉलेज देवप्रयाग

तथा ओक ग्रोव स्कूल मसूरी में शिक्षण कार्य करने के अतिरिक्त डी.आई.टी. युनिवर्सिटी एवं ग्राफिक ऐरा युनिवर्सिटी में अध्यापन किया है। सामाजिक दायित्व निभाते हुए आपने कन्या भ्रूण हत्या के विरुद्ध कन्या जीवन दायिनी संस्था के माध्यम से जन मानस को जाग्रत किया। अखिल भारतीय गढ़वाल सभा देहरादून की गढ़वाली भाषा समिति की अध्यक्ष के रूप में व्याकरण एवं शब्द कोष निर्माण में अहम भूमिका निभाई। वरदान संस्था की अध्यक्ष के रूप में स्वयं सहायता समूहों का गठन करके उन्हें स्व रोजगार के कार्यक्रमों से जोड़ा। आप भारतीय जनता पार्टी उत्तराखण्ड इकाई की प्रदेश मंत्री, स्वयंसेवी प्रकोष्ठ की प्रदेश अध्यक्ष, संस्कृति प्रकोष्ठ की प्रदेश अध्यक्ष और भारतीय जनता पार्टी महिला मोर्चा की प्रदेश उपाध्यक्ष जैसे पार्टी के महत्वपूर्ण पदों का निर्वहन कर रही हैं। आप 'गढ़वाली भाषा का व्याकरण' नामक शोध ग्रन्थ के लिए वर्ष-2012 में राजराजेश्वरी सम्मान से अंलकृत की गई। मासिक पत्रिका हलन्त की उप सम्पादक के रूप में आपने सम-सामयिक विषयों पर लेखन किया है तथा आपकी गढ़वाली कवितायें विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में छपी हैं।

साधना शर्मा- मात्र 16 वर्ष की आयु में मेरठ से निकलने वाले समाचार पत्र 'दैनिक प्रभात' के लिए संवाददाता के रूप में अपना कैरियर शुरू करने वाली साधना शर्मा उत्तराखण्ड की वरिष्ठ पत्रकार हैं जिनका खास कॉलम 'नगर में घूमता दर्पण' दैनिक 'दून दर्पण' समाचार पत्र का बहुत लोकप्रिय कॉलम है। लगभग एक दशक तक देहरादून के प्रतिष्ठित स्कूलों में अध्यापन कर चुकी साधना शर्मा अनेक पुरस्कारों से सम्मानित हैं जिनमें प्रमुख हैं 'दून निष्ठा सम्मान (दून लेडिज क्लब) दून विदुषी सम्मान (भारतीय कला कुंज), 'विशेष महिला सम्मान' (पंजाब नेशनल बैंक अंचल कार्यालय), विकलांग सेवा सम्मान (राष्ट्रीय अपंग विकास संस्था), सारस्वत सम्मान (अखिल भारतीय हिन्दी सेवा संस्थान) आदि। कन्या भ्रूण हत्या रोकने हेतु किये गये कार्यों के लिए आपको 'सिख वेलफेयर एसोसियेशन' द्वारा सम्मानित किया गया है तथा आपका 'अमेरिकन बायोग्राफिकल इन्स्टीट्यूट द्वारा इन्टरनेशनल हू इज हू ऑफ प्रोफेशनल एण्ड बिसनैस वूमैन' के लिए भी चयन हुआ है। पत्रकारिता को मिशन के रूप में अपनाते हुए आपने निर्भीक तथा निष्पक्ष पत्रकारिता द्वारा जनता की समस्याओं को शासन तक पहुंचाया है। आपने महिलाओं के लिए विशेष कॉलम महिला दर्पण भी लिखा है जिसमें अपने-अपने क्षेत्रों में विख्यात महिलाओं के साक्षात्कार किये हैं। आप सूचना एवं जन सम्पर्क विभाग (उत्तराखण्ड) में समाचार समिति की मान्यता प्राप्त प्रतिनिधि हैं तथा आपकी लिखी कहानी 'बेटी' पर डाक्यूमैंट्री फिल्म 'बेटी' बनी है। विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में आपके 1500 से अधिक लेख प्रकाशित हो चुके हैं।

डॉ. गीता नौटियाल- जिला रुद्रप्रयाग के मक्कूमठ ग्राम में सन् 1960 में जन्मी डॉ. गीता नौटियाल का जीवन कर्त्तव्य निष्ठा, समाजसेवा तथा मानवीय मूल्यों के प्रति समर्पण की एक मिसाल रहा है। कक्षा पांच तक गांव में ही पढ़ाई करने के बाद कक्षा छः में उच्चतर माध्यमिक विद्यालय पलद्वाड़ी में दाखिला लिया जहाँ लगभग 3.5 कि.मी. घनघोर जंगल से होते हुए आप पढ़ने जाया करती थीं। इन विषम परिस्थितियों में भी सदैव घर के कार्यों में माँ का हाथ बटाते हुए हाईस्कूल की परीक्षा पास की। इन्टर तथा बी.ए. की परीक्षा प्राइवेट ही दी। विवाहोपरान्त राजकीय महाविद्यालय गोपेश्वर से हिन्दी में एम.ए किया तथा सन् 1989 में 'छायावादी काव्य की क्रिया संरचना' पर डी.फिल. की उपाधि मिली। सन् 1987 से अध्यापन में कार्यरत डॉ. गीता नौटियाल ने अनेक विद्यालयों में पढ़ाया है तथा सदैव अपनी अनूठी शैली से विद्यार्थियों के मानस पर अमिट छाप छोड़ी है। आप छात्रों के बौद्धिक विकास के साथ उनकी रचनात्मक एवं सृजनात्मक शक्तियों के विकास हेतु सदैव प्रयासरत रहती हैं। आपने पहाड़ी जीवन के विभिन्न पहलुओं को अपनी रचनाओं में जीवन्तता से उभारा है। डॉ. गीता की गढ़वाली कविताओं को वीमैन्स स्टडीज सैन्टर एस.जी.आर.आर. (पी.जी) कॉलेज द्वारा प्रकाशित किया गया है।

प्रोफेसर जयवन्ती डिमरी एच.पी. यूनीवर्सटी, शिमला के अंग्रेजी विभाग की पूर्व अध्यक्ष तथा आई.आई.ए.एस. शिमला की पूर्व फैलो, प्रोफेसर जयवन्ती डिमरी बहुमुखी प्रतिभा की धनी हैं। हिन्दी तथा अंग्रेजी दोनों भाषाओं में लेखन करने के अतिरिक्त आप अनुवादक तथा समीक्षक भी हैं। आपकी पांच पुस्तकें हिन्दी में तथा तीन अंग्रेजी में प्रकाशित हुई हैं। इसके अलावा आपके अनेक शोधपत्र राष्ट्रीय, अन्तर्राष्ट्रीय पत्रों में छप चुके हैं। आपने कोलम्बो प्लान के अन्तर्गत नाइजीरिया (1982-83) तथा भूटान (1997-99) में शिक्षण कार्य किया। आपकी हिन्दी कहानियाँ विभिन्न राष्ट्रीय पत्र-पत्रिकाओं में छपती रहती हैं जिनका अंग्रेजी, तेलुगु तथा मराठी भाषा में अनुवाद हुआ है। आपकी रचनायें ज्ञानपीठ प्रकाशन द्वारा प्रकाशित हुई हैं। 'आर्य स्मृति साहित्य सम्मान' द्वारा अलंकृत वर्तमान में दून विश्वविद्यालय में गैस्ट फैकल्टी प्रो. डिमरी की रचनाओं में मुख्य हैं- *The Images and Representation of the Rural Woman: A Study of the Selected Novels of Indian Women Writers* (IIAS, 2012). *The Drukpa Mystique: Bhutan in Twenty First Century* (Authorspress, 2004), two novellas in Hindi *Surju Kei Naam* (Jnanpith, 2006) *Pind daan* (Vani, 2012) and *Sahastra Netradhari Nayak* (Rajkamal 2009), a translated work.

वीमैन्स स्टडीज़ सैन्टर
श्री गुरुराम राय (पी.जी.) कॉलेज, देहरादून
ISBN: 978-81-923430-2-0
website : www: sgrrcollege.com
e-mail : wscsgrrcollege@yahoo.com